तुलसी जन्मभूमि

लेखक

प्रो० सूर्यप्रसाद दीक्षित

संपादक

डा० कैलाशदेवी सिंह

प्रकाशक

शब्दशिल्पी, लखनऊ

अयोध्या पैकेज के अंतर्गत 'अयोध्या शोध संस्थान' द्वारा वित्तपोषित योजना के सहयोग से प्रकाशित

मूल्य	50/= रुपये
प्रथम संस्करण	1999
प्रकाशक	शब्द शिल्पी प्रकाशन शगुन पैलेस, बेसमेन्ट–२०, ३–सप्रू मार्ग, लखनऊ
मुद्रक	*ऑपटेक ग्राफिक्स* शगुन पैलेस, ३–सप्रू मार्ग, लखनऊ।
आवरण	सलिल

अनुक्रम

प्राक्कथन

तुलसी जन्मस्थली के प्रश्न पर जो राष्ट्रीय परिसंवाद चल रहा है, उसका अन्तिम निर्णय अभी तक भले ही घोषित न हो पाया हो, पर इसके अनेक महत्वपूर्ण पक्ष अवश्य ही प्रकाश में आ गए हैं।

इन दिनों तुलसी जन्मस्थली का दावा करने वाले प्रमुख तेरह स्थान हैं– १ राजापुर (जिला बाँदा) २. चित्रकूट, ३. सोरो (निकट– एटा) ४ राजापुर (पसका जिला–गोण्डा) ५. अयोध्या (फैजाबाद), ६. राजापुर (प्रयाग) ७. हस्तिनापुर (निकट–चित्रकूट), ८ बलिया (उ०प्र०) ९. हाजीपुर (बिहार) १०. रामपुर (जिला–सीतापुर) ११. राजापुर (जिला शाहाबाद बिहार) १२. बरेली (उ०प्र०) १३ ग्राम–माना (जिला बस्ती)। इनके अतिरिक्त 'सूकरखेत' भी पूरे देश में कई स्थलों पर खोज लिए गए हैं। चूंकि गोस्वामी जी ने अपने एक आत्मकथ्य मे 'सूकरखेत' में रामकथा सुनने का उल्लेख किया है, इसलिए सबसे अधिक जोर 'सूकरखेत' पर दिया जा रहा है। इसके चार प्रमुख दावेदार हैं– (१) सूकरखेत – पसका (गोण्डा), २. सोरो, ३. सूकरखेत–कामदगिरि परिक्रमा मार्ग चित्रकूट, ४ सुकुरुखेत अर्थात् कुरुक्षेत्र (हरियाणा)। इनमे भी मुख्य हैं– सोरो और पसका।

प्रथमद्रष्ट्या ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तर भारत के जिस क्षेत्र मे प्रतिहार राजाओ का आधिपत्य था, वहाँ महावाराह और बाराही के मन्दिर स्थापित थे और उन क्षेत्रों को "सूकरखेत" माना जाता था। अत: इस "सूकरखेत" शब्द से किसी एक स्थान का निष्कर्ष नहीं निकल रहा है। शायद यही कारण है कि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने इतिहास ग्रन्थ में तुलसी के जीवन पर विचार करते हुए यह टिप्पणी की थी कि सारे झगडे की जड़ यह सूकरखेत ही है।

चूँकि गोस्वामी जी की जन्मभूमि से सम्बन्धित कोई अन्य ठोस तथ्याधार नहीं मिल रहा है, इसलिए सारा ध्यान "सूकरखेत" शब्द में केन्द्रित हो गया है। क्योंकि जहाँ सूकरखेत सिद्ध हो जायेगा, उसी के आस–पास उनकी जन्मभूमि मान ली जाएगी। यह तर्क देकर कि बाल्यावस्था मे कोई बहुत दूर गुरु के पास पढने नही जा सकता था। ऐसा होता भी है और नहीं भी। आखिर कृष्ण मथुरा से उज्जैन कैसे गये थे? अनाथ बालक तुलसीदास ने, सभव है अपने जन्मस्थान के निकट वर्ती सूकरखेत में गुरु से रामकथा सुनी हो। सम्भव है, किसी साधु–सन्त के साथ वे कहीं बहुत दूर तक निकल गये हो। उन्होंने अपने किशोर काल में यह कथा सुनी थी। बचपन में सुने होते तो कुछ भी याद न आता। आत्मकथ्य बताते है कि उन दिनों वे मारे–मारे फिर रहे थे। सम्भव है, किसी "रमता जोगी, बहता पानी" यानी साधु मण्डली में शामिल हो गये हो और कहीं से कहीं के "सूकरखेत मे पहुँच गये हो। इस तथाकथित "सूकरखेत" मे उन्होंने गुरु नरहरिदास से रामकथा सुनी हो, इसका भी कोई पुष्ट प्रमाण नही है। नरहरिदास, नरसिह

रामानन्दी परम्परा के महन्त बताएं जाते हैं, पर उनकी भी स्थिति विवादास्पद है। गोस्वामी जी ने उनका कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है। गुरुजनों का उल्लेख तब प्राय: किया भी नहीं जाता था। उन्होनें मानस के एक बरवै में "कृपा सिंधु नर रूप हर/हरि का जो उल्लेख किया है, वह भी विवादास्पद बना हुआ है।

वस्तुत: सारा विवाद "सूकरखेत" में केन्द्रित हो गया है। शूकरक्षेत्र, सूकरखेत और सोरों--- तीनों शब्दों का निरुक्ति तथा व्युत्पत्तिगत विकास सम्भव है या नहीं? इसको लेकर भी मतभेद है। बहुमत यह है कि सूकरखेत से सोरों नहीं हो सकता। सूकरखेत शब्द का विच्छेद कुछ पाठों के आधार पर डॉ० उदयशंकर दुबे ने किया है। इसका निर्णय मूल प्रतियों की प्रामाणिकता का परीक्षण करके ही किया जा सकता है। निस्संदेह कूटबुद्धि भर गयी है-- इस प्रकरण में। चाहिए सहजबोध और शुद्ध बुद्धि।

यह पुस्तक सैकड़ों वर्षों से लम्बित विवाद को समाहित करने के उद्देश्य से लिखी गई है। इसके पीछे मूल आग्रह रहा है तुलसी जैसे महाकवि का प्रामाणिक जीवन वृत्त प्रस्तुत करने का। मैंने राजापुर (बांदा) सोरों, गोण्डा, अयोध्या, काशी, प्रयाग, चित्रकूट आदि स्थानों के अवशेषों की स्टिल और वीडियो चित्रावली की व्यवस्था करके, प्राचीन ग्रन्थों तथा साक्ष्यों का उपयोग करते हुए तुलसी की शब्दावली तथा लोक संस्कृति पर विचार करते हुए और इस प्रश्न से संबधित अनेक गोष्ठियों में विशेषज्ञों से संवाद करके जो मत स्थिर किया है, वह क्षेत्रीय राजनीति तथा वैचारिक दुराग्रह से मुक्त है। इस निष्कर्ष तक पहुंचने मे लगभग १ दशक तक प्रयास करना पड़ा है। आशा है--इस समाधान पर सदाशयतापूर्वक विचार किया जाएगा।

इस पुस्तक के प्रणयन में डा० जितेन्द्रनाथ पाण्डेय और डा० कैलाशदेवी सिंह ने यथेष्ट सहायता दी हे। शोध सर्वेक्षण कार्य में डा० सत्यदेव मिश्र, डा० पवन अग्रवाल और डा० हेमलता ने पर्याप्त श्रम किया है। इसकी प्रकाशन व्यवस्था अयोध्याशोध संस्थान तथा शोध समिति (लखनऊ विश्वविद्यालय) ने की है। इन सब के प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूं।

तुलसी जयती, १६६६
'साहित्यिकी'
डी० ५४, निरालानगर, लखनऊ

साभिवादन
सूर्यप्रसाद दीक्षित
प्रोफे० पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष
लखनऊ विश्वविद्यालय

तुलसी–जन्मभूमि–विवाद

कोई महापुरुष जब बहुत विख्यात हो जाता है तो उसके जीवन से सम्बद्ध एक–एक स्थान महत्त्वपूर्ण हो जाता है। यदि इन स्थानों को लेकर कोई भ्रम या विवाद छेड दिया जाता है तो वह क्षेत्रगत राजनीतिक मुद्दा ही नहीं, अपितु विभिन्न पक्षों के मध्य जीवन–मरण का प्रश्न बन जाता है।

सम्प्रति तुलसी जन्मभूमि का मुद्दा ऐसा ही है। इन दिनों एक दर्जन से अधिक स्थान तुलसी–जन्मभूमि होने का दावा कर रहे हैं। सबसे पहला दावा था– राजापुर, बाँदा का। तुलसी के एक सखा शिष्य पसका–निवासी बाबा बेनीमाधौ ने 'गोसाईं चरित' नामक एक ग्रन्थ लिखा था, जो आज कहीं सुलभ नहीं है। उसमे मनचाहे प्रक्षेप भरते हुए 'मूल गोसाईं चरित' ग्रन्थ तैयार किया गया और चित्रकूट मे तुलसी– प्रवास के तर्क के सहारे वहीं के निकटस्थ राजापुर को तुलसी जन्मभूमि–रूप में स्थापित कर दिया गया। अंग्रेज इतिहासकारों ने रजियापुर, विक्रमपुर, तारी, दूबे का पुरवा, हाजीपुर, सोरो, अयोध्या आदि कई–कई स्थानों का उल्लेख किया। हमारे प्राचीन साहित्येतिहास लेखक भी कई नाम गिनाते रहे किन्तु इसी बीच राजापुर में सरकारी स्मारक बन गया, इसलिए प्रमादजन्य त्वरावश उसे ही जन्मभूमि मान लिया गया। कुछ समय पश्चात् गजेटियरों के साक्ष्यों और रत्नावली तथा नंददास के तर्कों के सहारे सोरों (एटा) का पक्ष सामने आया, किंतु वह भी सन्दिग्ध ही सिद्ध हुआ। इधर राजापुर (गोण्डा)सूकरखेत पसका, 'आत्माराम का टेपरा 'आदि स्थान प्रकाश में आये और इस प्रकार (गोण्डा) राजापुर की नयी दावेदारी प्रकट हुई।

आज इन तीनों स्थानों से जुड़े तर्कों तथा तथ्यों के सूक्ष्म विवेचन, वस्तुनिष्ठ विश्लेषण और निस्संग निर्वचन की आवश्यकता है। मैंने इस स्थानों का भ्रमण करके, साक्ष्यों का अध्ययन करके तुलसी विशेषज्ञों की राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित करके कुछ निष्कर्ष निकाले हैं। मुख्य निष्कर्ष यह है कि किसी पक्ष के पास ऐसा कोई प्रामाणिक साक्ष्य नहीं, जिसके आधार पर उस स्थान को कर्मभूमि न कहकर तुलसी की जन्मभूमि मान लिया जाये। फिर भी जन्मभूमि का कुछ निर्णय अब ५०० वर्ष बीत जाने के बाद हो ही जाना चाहिए । मुझे इसकी सम्भावना तुलसी के आत्मकथ्यो मे परिलक्षित होती है, बशर्ते सदिच्छापूर्वक हम संगत समाधान खेजने का संकल्प करलें।

गोस्वामी ने मानस के प्रस्तावना प्रकरण में लिखा है कि बाल्यावस्था मे सूकरखेत में उन्होंने रामकथा सुनी थी। इस रामकथा अर्थात् बाल्मीकि 'रामायण' के कई संस्करणों में चौबीस हजार के आस पास श्लोक हैं। इसका एक पारायण

एक महीने मे पूरा हो पाता है। गोस्वामी ने कई कई बार गुरुमुख से यह कथा सुनी । तात्पर्य यह कि महीनों बल्कि कई वर्षों तक वे सूकरखेत में रहे यह तभी सम्भव था, जब वे किसी निकटस्थ गाँव मे उत्पन्न या वहाँ के रहने वाले होते।

सूकरखेत यों तो देश में ३५ जगहों पर खोज लिए गए हैं, किन्तु अब मुख्य विवाद सोरों (एटा) और पसका (गोण्डा) के सूकरखेत के बीच रह गया है। सोरो पवित्रतीर्थ है , किंतु वह सूकरखेत का तद्भव नही है। सुकुरुखेत (कुरुक्षेत्र) की व्युत्पत्ति भी अलग लगती है। इधर कामदगिरि परिक्रमा मार्ग (चित्रकूट) मे सूकरखेत और नरहरिआश्रम बना लिया गया है जो इस कथन का साखी है कि क्षेत्रीय राजनीति किस प्रकार तुलसी–जीवनवृत्त को उलझाती जा रही है? इस पर विचार करते हुए बहुत पहले आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने दो टूक निर्णय दिया था कि असली सूकरखेत गोण्डा जिले में तिमुहानी वाला है। अब दुराग्रह छोड़कर इसे ही स्वीकार कर लेना चाहिए।

यह भी विचारणीय है कि हिन्दी में कम से कम ३ तुलसी हुए हैं।एक दुबे एक मिश्र, एक सुकुलवंश। शेष तुलसी 'मानसकार तुलसी' से भिन्न हैं। इसके अनेक प्रमाण प्राप्त हो गए हैं।

तुलसी विषयक जो प्राचीन जीवनी ग्रन्थ प्राप्य है, वे प्रक्षिप्तांशों से मुक्त नहीं रह पाए । उनमें अधिकतर सन्दिग्ध हैं। तुलसी के शोधक विशेषज्ञ अलग–अलग खेमों में बंटे हुए हैं। पत्रकार और जन प्रतिनिधि सनसनी खेज सस्ती लोकप्रियता और निहित प्रलोभनों के कारण इस विवाद को जटिलतर बनाते जा रहे हैं। जो दलगत हो जाते हैं वे एकपक्षीय हो ही जाते है।

आवश्यकता इस लम्बित विवाद के अपेक्षाकृत अधिकाधिक तर्कसंगत सम्भावित समाधान को खोज निकालने की है।

प्रथमदृष्ट्या ऐसा लगता है कि सूकरखेत के सन्निकट ही तुलसी का जन्मस्थान होना चाहिए। 'इदमित्थम् ' कोई दावा नहीं किया जा सकता है। हाँ इनके विभिन्न पक्ष विचारणीय अवश्य हैं।

राजापुर (बांदा) का पक्ष

जन्मभूमि के रूप में राजापुर का दावा सबसे पुराना है। इसकी शुरुआत हुयी गोस्वामी जी के समकालीन सखा और शिष्य महात्मा बेनी माधव दास द्वारा लिखित 'गोसाईं चरित' से। उसमें एक पंक्ति है --

'राजापुर जमुना के तीरा।
तँह तुलसी का भया शरीरा।।'

इस कथन के आधार पर जनसाधारण मे राजापुर नाम प्रचारित हो गया। यद्यपि इस राजापुर के साथ बाँदा या बुन्देलखण्ड का उल्लेख नहीं है और यद्यपि राजापुर नाम के स्थान यमुना के तट पर बहुशः मिलते हैं, फिर भी बाँदा जिले का राजापुर नामक कस्बा चूँकि सबसे प्रसिद्ध है, इसलिए उसी को इस कथन के अनुसार तुलसी जन्मभूमि के रूप में मान लिया गया।

राजापुर पक्ष के विद्वान तुलसी जन्मभूमि का दावा करते हुए निम्नलिखित तर्क देते हैं :--

(१) यह स्थान विगत २०० वर्षों से मान्यता प्राप्त है, इसलिए निर्विवाद रूप से यही तुलसी की जन्मभूमि है। अन्य स्थानों के दावेदार परवर्ती हैं। ये लोग किसी न किसी निहित स्वार्थ से प्रेरित होकर इसको विवादास्पद बना रहे हैं।

(२) राजापुर मे आज भी तुलसी के शिष्य और उत्तराधिकारी गणपति उपाध्याय के वंशज विद्यमान हैं। इन्हें अकबर द्वारा १५५४ में ६६ बीघे की तहबजारी के माफीनामें प्राप्त थे। वाजिवुल अर्ज के अनुसार तुलसी के शिष्य गणपति पुत्र ऊधौ के नाम कई घाट बाट दर्ज हैं, जिनके प्रमाण अभी द्रष्टव्य हैं। अकबर का माफीनामा इस प्रकार है-- आमिलान हाल इस्तकबाल परगने गहौरा सिरकार कालिंजर सूबे इलाहाबाद के कौमई पं० मदारीलाल गोसाइ तुलसीदास के वश मे महसूल सायर तिहबाजारी कलारी बगूजर श्री यमुनाजी राजापुर अमलै पर बमूजिव सनद बादशाही व सूबेदारान व राजा बुन्देल खंड कदीम मुकर्रर सिरवार में हाल है सो हुस्व मुआइन के अमल सो मुजाहिमन हुजै। हर साल नई सनद मामयो ता २२१ सवान १२।।

(३) इन वंशजों को हिंदू राजाओं ने १८१२ सं० १८८० के बीच जो माफीनामे

दिये, वे अभी सुरक्षित हैं। हिन्दूपतिजू देव का १८१३ का अभिलेख द्रष्टव्य है।

(४) कुछ गजेटियरों में तुलसी को सोरों से आया हुआ लिखा गया है – वह प्रामाणिक नही है।

(५) यहां उत्तरप्रदेश शासन द्वारा (पंतजी संपूर्णानन्द जी की सहमति से) तुलसी स्मारक स्थापित किया गया है। शासन द्वारा इसे जन्मभूमि घोषित करने के पूर्व जनप्रतिनिधियों और विद्वानों के मध्य गंभीर चिन्तन मनन हुआ था।

(६) स्मारक के निकट गोस्वामी जी का पुस्तैनी मकान रहा है। यह जनश्रुति है कि वह मूल कच्चा मकान यमुना की बाढ़ में बह गया था। अब वहीं नया मंदिर स्थित है।

(७) यहां टोडरमल से प्राप्त गोस्वामी जी का हस्तलिखित 'रामचरितमानस' सुरक्षित है। इसके सम्बन्ध में कई जनश्रुतियाँ हैं। जैसे कि इसे चोर लेकर भागे थे। लोगों ने नावों या घोड़ों पर चढ़कर उनका पीछा किया। उन्होंने हस्तलेख यमुना में फेंक दिया। उसे जाल डालकर निकाला गया। हस्तलेख के ऊपर नीचे के अनेक पृष्ठ गल गये थे। शेष अयोध्याकांड स्मारक में सुरक्षित है।

(८) यहां गोस्वामीजी के द्वारा स्थापित और पूजित (संकट मोचन मंदिर में) हनुमत मूर्ति अभी बरकरार है। यहां तुलसी द्वारा रोपित एक वटवृक्ष भी है।

ये भी जन्मभूमि के प्रमाण नहीं।

(९) राजापुर पक्ष के विद्वान पहले सूकरखेत और नरहरि का नाम नहीं लेते थे, किन्तु अब चित्रकूट कामदगिरि परिक्रमा मार्ग पर नरहरिदास और तुलसीदास की समाधियाँ (छतरियाँ) मिल गयी हैं। उसके आस–पास की बस्ती में सुअरों का बाहुल्य है, शायद इसलिए उसको सूकरखेत कहा जाने लगा है।

(१०) राजापुर में निकट (मात्र ४ मील दूर) तारी गाँव को तुलसी ननिहाल को ही ग्रियर्सन ने जन्मभूमि कहा हैं।

(११) गोस्वामीजी के काव्य में जिन देशज शब्दों का प्रयोग हुआ है, उनके सम्बन्ध में राजापुर पक्ष का दावा है कि ये शब्द केवल इसी क्षेत्र में प्राप्त होते हैं। यह बुंदेली न होकर गहलौती, बनफरी और बघेली मिश्रित अवधी है।

(१२) इस पक्ष के विद्वानों ने राजापुर चित्रकूट क्षेत्र की संस्कृति को तुलसी साहित्य में यत्र तत्र सर्वत्र प्रतिबिम्बित कर दिखाया है ।

(१३) पिछले दशकों में कुछ साक्ष्यों के आधार पर यह स्थापित किया गया

कि तुलसी की दो फिटी काले पत्थर की मूल मूर्ति यमुना की धारा (धोबीघाट) से प्रथमबार यहीं मिली है।

किंतु यह तुलसी की है, राजा साधु की नहीं, इसका कोई प्रमाण नही मिला।

(१४) कुछ विद्वानों का यह तर्क है कि गजेटियरों मे राजापुर और विक्रमपुर दो गाँवों के उल्लेख हैं। इन्हें रजियापुर, दूबन को पुरवा भी कहा जाता है। मंझगवा भी इसी मौजे का नाम है।

(१५) राजापुर के पक्ष में अधिसंख्य विद्वान यह मानते रहे हैं कि गोस्वामी जी का जन्म यहीं हुआ था। वे १५ वर्ष की अवस्था में रामकथा सुनने सूकर–खेत गये और कालान्तर में अयोध्या, चित्रकूट आदि स्थानों में रहे। तब 'अतिरह्यो अचेत' का यही अर्थ है।

(१६) राजापुर के समर्थक यह मानते है, कि तुलसी का जन्म यहाँ अभुक्तमूल नक्षत्र में हुआ था, जिसमें आठ वर्षों तक पुत्रमुख दर्शन का निषेध था। अत पालन–पोषण हेतु तुलसी को चित्रकूट के निकट हरिहरपुर ग्राम में फूफा बुआ अथवा दासी चुनिया के पास भेज दिया गया था।

(१७) सूकरखेत के संबंध में राजापुर के विद्वानों का तर्क है कि पूरे देश मे २४ या ३५ सूकर क्षेत्र हैं। उनका कथन है कि चित्रकूट में भी एक सूकरखेत है।

(१८) सोरों, एटा के संबंध में इन विद्वानों का तर्क है कि यह विवाद गजेटियरों से निकला है। वे इसका उत्तरदायी तत्कालीन डिप्टीकलक्टर लाला सीताराम को मानते हैं, जिन्होनें १६०८ में सोरों के पक्ष में यह सब लिखवा दिया था।

(१६) गोण्डा के सूकरखेत की खोज, इनके अनुसार तत्कालीन पुलिस अधीक्षक श्री अवधनारायण सिंह की अपनी कल्पना है।

(२०) इन विद्वानों के मतानुसार गोस्वामी जी ने जब पहली बार रामकथा सुनी तब उनकी अवस्था १३ वर्ष की थी। उनका यज्ञोपवीत संवत् १५६१ अर्थात् ७ वर्ष की अवस्था में हुआ था। इसके बाद ही वे सूकरखेत गए होंगे।

ये तिथियाँ अनुमानाश्रित है अतः स्वीकार्य नहीं।

(२१) नरहरि के संबंध में इनका मत है कि पसका में जगदेवदास की गददी है। उनकी वंशावली में संख्या १८ पर एक नरहरिदास हैं, पर वे तुलसी के

(२२) कई ग्रंथों मे नदीपार के गॉव महेवा (तहसील सिराथू) को तुलसी की ससुराल बताया गया है। यहीं पत्नी मोह वश वे भादों की नदी को शव द्वारा पार करके पहुंचे थे और यही रत्नावली से प्रबोध पाकर संन्यास ग्रहण किया था।

(२३) आर्कियोलॉजिकल सर्वे की रिपोर्टों के आधार पर चित्रकूट से २४ मील तथा कर्वी से १८ मील दूर राजापुर नामक यह कस्बा बहुत पहले से बसा हुआ था।

(२४) इनका तर्क है कि सोरो मूलतः ऊकल क्षेत्र है। हिरण्याक्ष वध के बाद वह शूकर क्षेत्र बना। व्युत्पत्ति के अनुसार शूकर से सोरों बन ही नहीं सकता है।

यह शब्द सुकृत्य से बना है। सौकरम्, सोरम से भी इसकी व्युत्पत्ति बतायी गयी है।

(२५) सोरों के पास रामपुर गाँव को तुलसी की जन्मभूमि घोषित करना श्री गोविंद भट्ट और डा० रामदत्त भारद्वाज की कल्पना है। इसका खडन 'भारतीय हिन्दी परिषद' की दिल्ली संगोष्ठी में डा० गोवर्द्धन नाथ शुक्ल तथा अन्य तुलसी–विशेषज्ञों ने कर दिया है।

(२६) हिन्दी साहित्य के प्रथम इतिहासकार श्री शिवसिंह सेंगर ने राजापुर (इलाहाबाद) को प्रथम बार तुलसी की जन्मभूमि माना है। राजापुर का समर्थन अब तक अनेक प्रमुख विद्वानों ने किया है, जैसे – मिश्रबंधु, डा० श्याम सुदर दास, डा० राम बहोरी शुक्ल, रामगुलाम त्रिपाठी, विजयानद त्रिपाठी, आचार्य विश्वनाथ मिश्र, डा० राम कुमार वर्मा, हनुमानप्रसाद पोद्दार, डा० बलदेव मिश्र, मैथिलीशरण गुप्त, मुशी अजमेरी, बनारसीदास चतुर्वेदी, बेनीपुरी, आचार्य विनोवा भावे, डा० लोहिया, डा० उदय भानु सिंह आदि।

(२७) राजापुर में सरयूपारीण ब्राम्हणों की पर्याप्त संख्या है।

यहाँ से अधिक संख्या पूर्वांचल मे है।

(२८) यहॉ की भाषा बुन्देली न होकर अवधी है।

तुलसी की अवधी अयोध्या में अधिक है।

(२९) नरहर दास के संबंध में इन विद्वानों का कथन है कि मानस के चर्चित सोरठे – 'कृपा सिंधु पर रूप हर' मे श्लेष नहीं है। यह जाबालि सहिता के एक श्लोक का अविकल अनुवाद है।

(३०) राजापुर (बाँदा) का पक्ष २०० वर्षों से मान्यता प्राप्त है। अंगरेज शासकों ने इसे १६०६ से स्वीकृत दे रखी है। तुलसी मदिर हेतु तब ७०० रूपया अनुदान स्वीकृत हुआ था।

(३१) इस बीच में उ०प्र० शासन ने स्मारक के लिए २५ लाख का अनुदान

घोषित किया। राजापुर पक्ष का आरोप है कि इसी की छीना झपटी के लिए सोरो ओर गोण्डा के विवाद खड़े कर दिये गये हैं।

(३२) तुलसी साहब (१८२०–१६००) ने 'घट रामायण' में राजापुर को ही तुलसी की जन्मभूमि माना है। यह सबसे प्राचीन प्रमाण है।

(३३) आज भी राजापुर में गल्ले की बिक्रीपर तुलसी के नाम खोंची चलती है। इससे तुलसी और राजापुर की अनन्यता स्वत. सिद्ध है।

(३४) राजापुर में कानून गोय कायस्थ वंशावली सुरक्षित है। उससे इस जन्मभूमि की पुष्टि स्वत होती है। इसमे उल्लेख है–

सुनहु वंश श्याम सुन्दर के। भये कानून गोय अकबर के।

रहे तासु गुरु तुलसीदासा। रामायन जिन्ह कीन्ह प्रकासा।।

यह वंशावली राजापुर के निकट ग्राम खटवारा के मुंशी बलदेव प्रसाद से गोण्डा निवासी अयोध्याप्रसाद पाण्डेय को प्राप्त बतायी जाती है। किन्तु इसमें भी राजापुर में पैदा होने का उल्लेख नहीं है।

(३५) यह जनश्रुति है कि तुलसी के प्रपितामह चित्रकूट भ्रमण हेतु आये थे और यहीं बस गये थे।

(३६) दूबन का पुरवा, राजापुर और रजियापुर एक ही हैं। इसका एक प्राचीन नाम विक्रमपुर है। संवत १८१३ में हिन्दूपत ने इसका नाम राजापुर रख दिया था। इस नाम का कोई संबंध राजा साधु से नहीं है।

(३७) तुलसी ने तापस प्रसंग में स्वंय को प्रस्तुत किया है, जो अत्यत स्वाभाविक तथा परंपरा पोषित है। श्री शंभू नारायण चौबे ने इसे प्रक्षिप्त घोषित किया है, जबकि आचार्य रामचंद्र शुक्ल, विजयानंद त्रिपाठी, आचार्य विश्वनाथ मिश्र, डा० रामबहोरी शुक्ल आदि ने उसका समर्थन किया है। यह प्रसंग तुलसी के एक शिष्य द्वारा रचित प्रेम रामायण में भी पृष्ठ १६ पर आया है।

(३८) यह जनश्रुति है कि संवत् १६८२ में तुलसी की आचार्य केशव से भेट हुई थी। केशवदास निकटवर्ती राज्य ओरछा के दरबारी कवि थे, इसलिए तुलसी का भी स्थानीय होना प्रमाणित है।

(३६) यह भी कहा जाता है कि यहीं रहते हुए तुलसी को हितहरिवंश का पत्र प्राप्त हुआ था।

किन्तु यह जन्मभूमित्व का साक्ष्य नहीं है।

(४०) कुछ विद्वानो का मत है कि हरिहरपुर मे फूफा पुरन के घर तुलसी का लालन–पालन हुआ था। पुरन ने एक बार तुलसी को उनके पिता के पास पहुंचाने का प्रयास किया, किन्तु पिता आत्माराम ने बालक को अनिष्टकारी मानकर स्वीकार नहीं किया। इसी बीच स्वामी नरहर्यानंद वहाँ आये और वे इस बालक को अपने साथ अयोध्या लेते गये।

ये समस्त वृत्त जनश्रुति पर आधारित हैं।

(४१) जनश्रुति है कि चित्रकूट में ही कविवर रहीम की तुलसी से भेंट हुई थी। सीकरी निवासी रहीम और राजापुर/चित्रकूट निवासी तुलसी वस्तुतः निकटवर्ती थे।

(४२) तुलसी का टोडरमल से घनिष्ठ सम्बन्ध था। टोडरमल कालपी के निवासी थे। इससे तुलसी का भी पड़ोसी होना प्रमाणित होता है।

(४३) डा० काटजू की यह खोज (१६०६) रही है कि कभी राजापुर के निकट लालापुर मे गंगा–जमुना का सगम था। अब यह संगम खिसककर दूर चला गया है। अभी गंगा सिराथू से ६ मील की दूरी पर है। ऐसी स्थिति में यह भी कहा जा सकता है कि ५०० वर्ष पूर्व राजापुर गगा के तट पर बसा हुआ रहा होगा।

(४४) राजापुर के अनेक विद्वानों का मत हैकि तुलसी का जीवन–यापन मुख्यतः यहीं हुआ है। वे एक बार किशोरवस्था में सूकर खेत गये थे। पुनः लगभग ७० वर्ष की अवस्था (मानस रचनाकाल) में अयोध्या में रहे थे और अंततः उन्होने काशी वास किया था।

अस्तु, राजापुर सम्बन्धी सामग्री को विभिन्न कोणों से जॉचने परखने की आवश्यकता है। इस सन्दर्भ में यह तर्क बहुत घातक होगा कि राजापुर का प्रमाण सर्वथा अकाट्य है, इसलिए पुनर्विचारणीय नही है। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि राजापुर और चित्रकूट तुलसी की कर्मभूमि रही है, परन्तु वहॉ गोस्वामी जी बाहर से चलकर आये थे अथवा वहीं जनमे भी थे, इसे दस्तावेजो के सहारे सिद्ध करने की आवश्यकता है जो फिलहाल राजापुर पक्ष के पास प्राप्य नहीं है।

सोरो (एटा) का पक्ष

तुलसी जन्मस्थली के सम्बन्ध में सोरों (सूकरक्षेत्र) जिला एटा का दावा लगभग पचास वर्षों से चर्चा में है। सबसे पहले श्री गोविन्द वल्लभ भट्ट ने संवत् १९९६ की माधुरी पत्रिका में एक लेख प्रकाशित किया और फिर डा० रामदत्त भारद्वाज ने संवत १९९५ में तुलसी की तथाकथित धर्मपत्नी रत्नावली पर अपनी एक खोज प्रस्तुत की। इस प्रकार तुलसी चर्चा, तुलसी का घर बार, गोस्वामी तुलसीदास (२०१६ वि०) तुलसीदास और उनके काव्य (२०२१ वि० में) आदि ग्रन्थों द्वारा सोरों को तुलसी की जन्मभूमि के रूप मे स्थापित करने का प्रयास किया गया।

इस क्षेत्र में तीसरा महत्त्वपूर्ण कार्य किया आचार्य वेदव्रतशास्त्री ने। अब तक उनके चार ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं–१–तुलसी प्रकाश (संवत२०२१ वि०) २–गोस्वामी तुलसीदास (संवत २०३०)३–तुलसी वृत्त४–तुलसी वृत्त, तर्क और तथ्य (२०५२ वि०)।

इनके अतिरिक्त श्री प्रेमनारायण गुप्त ने सूकरखेत और तुलसीदास (२०२६ वि०) तुलसी चरितामृत (२०३७ वि०) तुलसी जन्मभूमि, एक मौलिक चिन्तन (१९९७वि०) जैसे ग्रन्थों का लेखन किया है। इन ग्रन्थों में सोरों को सूकरक्षेत्र सिद्ध किया गया है और 'मैं पुनि निज गुरुसन सुनी कथा सुसूकरखेत' के आधार पर सोरों को गोस्वामी जी की जन्मभूमि घोषित किया गया है। इन पुस्तकों में सर्वाधिक जोर दिया गया है सूकरक्षेत्र का माहात्म्य सिद्ध करने में। इस दिशा में बड़ा श्रम किया है डॉ० नरेशचन्द्र बंसल ने। इन विद्वानो का मूल लक्ष्य यह रहा है कि राजापुर जिला बॉदा तुलसी की जन्मभूमि नही है। गजेटियर के अनुसार तुलसी वहाँ सोरों से चलकर गये थे। इनकी खोजों का मूल निष्कर्ष है –

१– पं० प्रभुदयाल शर्मा ने १९९६ वि० में इटावा से ये तथ्य प्रकाशित किये थे। उनके आधार पर सोरों को तुलसी की जन्मभूमि कहा जा रहा है।

ये तथ्य प्रमाणपुष्ट नहीं हो पाए, अतः अभी विचाराधीन हैं।

२. सोरों पक्ष के विद्वानों का एक तर्क यह है कि तुलसी और नन्ददास सगे भाई थे। वे सनाढ्य व्राह्मण–शुक्ल थे। तुलसी ने 'दियो सुकुलवंश' स्वंय लिखा है, इसलिए सोरों ही तुलसी की जन्मभूमि है।

३. इन विद्वानों का तर्क है कि तुलसी ने जिन गुरु नरहरि से कथा सुनी वे सोरों निवासी नरसिंह चौधरी थे, जिनकी पाठशाला अभी वहाँ विद्यमान है।सम्प्रति उस

पर रंगनाथ चौधरी का कब्जा है।

४. सोरों से सम्बन्धित विद्वानों का यह दावा है कि नन्ददास के पुत्र कवि कृष्णदास ने 'वर्षफल' और 'सूकरक्षेत्र माहात्म्य' जैसी कृतियो की रचना १६५७ और १६७० में की थी, जिनसे जन्मभूमि की पुष्टि होती है।

५. सोरों पक्ष के अनेक विद्वानों ने तुलसी की भाषा पर विचार किया है। उनकी कई पाण्डुलिपियों का विवेचन करके यह सिद्ध करना चाहा है कि तुलसी की कृतियाँ जिस भाषा मे रचित हैं, वह सोरों की है। उनके अनुसार रामचरित मानस भी अवधी मे न होकर ब्रजावधी में रचा गया है।

६. तुलसी साहित्य मे ब्रज संस्कृति के प्रभाव की चर्चा भी कई विद्वानो ने की हैं। इसके सहारे उन्होंने तुलसी को सोरों निवासी सिद्ध किया है।

७. सोरों के समर्थन में अनेक स्थान अथवा अवशेष इंगित किये जाते हैं, जैसे

तुलसीदास की प्रतिमाएँ। सोरों में तुलसी की दो प्रतिमाएँ प्राप्त हुयी हैं। एक आदमकद श्वेत सगमरमर की है। दो प्रतिमाएँ काले पत्थर की हैं। जनश्रुति के अनुसार ये दोनों बहुत प्राचीन हैं और इस कथन की प्रमाण हैं कि तुलसी का जन्म इसी क्षेत्र में हुआ था।

८ सोरों मे एक हनुमत मूर्ति को तुलसी द्वारा प्रतिष्ठित कहा जाता है।

६ यहाँ एक वटवृक्ष है, जिसे तुलसी द्वारा रोपित बताया जाता है।

१०. सोरों में 'रामचरितमानस' की एक हस्तलिखित प्रति है, जिसे कुछ विद्वानो ने गोस्वामी जी का हस्तलेख कहा है।

११. पं० भद्रदत्त शर्मा ने 'तुलसी जन्मभूमि' नामक पुस्तक मे ५४ पुस्तकों का सदर्भ देते हुए यह सिद्ध किया है कि असली सूकरखेत सोरों ही हैं।

१२. सोरो सामग्री से सम्बंधित कई राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ आयोजित की गयी है, जो काफी कुछ सोरो के पक्ष में रही हैं।

१३. सोरों पक्ष का प्रथम संकेत गोकुलनाथ कृत 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' से निकाला गया है। उसमें यह उल्लेख है कि नंददासजी तुलसीदास के भाई थे और नंददास वहीं के निवासी थे। यही उल्लेख 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' में भी हैं।

१४ हरिराय रचित टीका में तथा कुछ अन्य अनेक काव्यों मे लिखा गया है कि नंदलाल और तुलसीदास गुरुबंधु/बधु थे और सनोढिया ब्राहमण थे।

१५. नाभादास रचित 'भक्तमाल' मे तुलसीदास का विस्तृत जीवन वृत्त प्रस्तुत

किया गया है, जो अधिकांशतः सोरों से सम्बद्ध है।

१६ सीताराम द्वारा की गयी 'भक्तमाल की टीका' मे तुलसी का जन्मस्थान अतर्वेद मे स्थित 'तारी' बताया गया है, जो सोरों के निकट है।

१७ 'प्रियादास की टीका' मे भी सोरों की पुष्टि की गयी है।

१८. सेवादास कृत 'प्रियादास की लीला टीका' में गंगा पार के बदरिया गांव को तुलसी की ससुराल लिखा गया हैं।

१६. प्राणेश कृत अष्टसखामृत (सवत् १८६५) में नंदराम को तुलसी अनुज 'द्विज सनोढिया सुकुल कवि' कहा गया है।

यह भी परवर्ती सृष्टि है और सन्देहास्पद है।

२०. अविनाशराय कृत 'तुलसी प्रकाश' (संवत् १६७७) मे आत्माराम सुकुल तथा गुरु नरहरि का उल्लेख है।

किंतु यह प्रमाणपुष्ट नहीं है।

२१. कई कृतियों में मुरारीलाल शुक्ल को तुलसी का वंशज घोषित किया गया है।

२२. सोरों पक्ष का तर्क है कि जीवाराम के पुत्र नंददास थे। उनके वंशज कृष्णदास का परिवार अभी सोरों में विद्यमान है।

२३. यह जनश्रुति है कि सोरों के 'जोगमार्ग' मुहल्ले में विद्यमान मुसलमान ग्वाले और बुद्धू के मकान के बीच स्थित खण्डहर मे तुलसी के पूर्वज रहते थे। इस तथाकथित अवशेष को दो दशक पूर्व सचित्र प्रदर्शित भी किया गया था, किंतु इधर उसकी चर्चा नही की जा रही है।

शायद यह छद्म तर्क रहा हो।

२४. श्री रामकृष्ण शर्मा के 'सोरों का सत' नामक जीवनी ग्रंथ मे और ऐसे ही कुछ अन्य ग्रंथों में उन्हें वही पैदा हुआ सिद्ध किया गया है।

२५. डिस्ट्रिक्टि गजेटियर बाँदा (१६०६) के पृष्ठ २८५–८६ पर डैक बैक मैन ने लिखा था It is said in reign of Akbar a holyman named Tulasidas came to the jungle on the bank of Jamuna where Rajapur Now stands." यहां 'केम' शब्द से स्पष्ट है कि तुलसी वहा पैदा नहीं हुए थे।

२६. इम्पीरियल गजेटियर खंड ११ (१८८६) पृष्ठ ३८५ पर अंकित है– Rajapur was found in the reign of Akbar by Tulasidas a devotee from soron who erected a temple and attracted many followers" इसमें सोरों का स्पष्ट प्रमाण है।

२७ डा० रामदत्त भारद्वाज ने रत्नावली विषयक कई महत्वपूर्ण खोजें की हैं। उनका तर्क है कि दीनबंधु पाठक की पुत्री रत्नावली तुलसीदास की धर्म पत्नी थी और विदुषी कवयित्री भी थी। उनसे तुलसी को जब प्रबोध प्राप्त हुआ तो वे चित्रकूट अयोध्या और काशी के वासी बन गए।

२८. अनेक विद्वानों का मत है कि जिस सूकरखेत मे तुलसी ने रामकथा सुनी थी, वह सोरों ही है।

२९. कुछ विद्वानों का तर्क है कि तुलसीदास पर अरबी का बड़ा प्रभाव पड़ा है। वे वस्तुतः पूरब के कवि न होकर पछाँही कवि अर्थात् सोरों निवासी हैं।

इस तर्क का जन्मभूमि से कोई संबन्ध नहीं है।

३०. तुलसी की भाषा के अन्वेषक डा० देवकीनंदन श्रीवास्तव का तर्क है कि तुलसी की अन्तिम कृति 'विनय पत्रिका' ब्रज में है। अतः उनका ब्रजवासी होना काफी संभावित है। तुलसी का बाल्यकाल सोरों के आस–पास बीता है, यह उनकी प्रतीति है।

३१. गोस्वामी जी का एक आत्मकथ्य है– 'दियो सुकुल जन्म सरीर सुदर तथा यह भरतखंड समीप सुरसरि थल भलो संगति भली।' इनके आधार पर विद्वानों का तर्क है कि गंगा किनारे स्थित रामपुर ही तुलसी की जन्मस्थली है। इसका नामांतर 'श्यामपुर' भी कहा गया है।

३२. पुरातात्विक खोजों के आधार पर यह सिद्ध किया गया है कि बाराह मंदिर और अन्य अवशेष सोरों में अभी सुरिक्षत हैं, जो उसके मूल शूकरक्षेत्र होने के प्रमाण हैं।

३३. 'तुलसी जीवन वृत्त, तर्क और तथ्य' में आचार्य वेदव्रत शास्त्री ने यह सिद्ध किया है कि तुलसीदास की जन्मभूमि सोरों ही थी।

यह खोज दुराग्रहग्रस्त है।

३४. उन्होनें राजापुर के दावे को डा० श्यामसुन्दर दास और डा० बडथवाल का षडयंत्र कहा है और उस दावे को निराधार घोषित करते हुए खुला पत्र जारी किया है। वस्तुतः सोरों पक्ष के विद्वानों ने रत्नावली, नंददास और शूकरक्षेत्र माहात्म्य से सम्बधित अनेक निबंध और ग्रंथ प्रकाशित किये हैं, किन्तु उनमें दम नहीं है।

३५. डा० ग्रियर्सन ने 'Notes on Tulasidas' में जनश्रुति से प्राप्त कई पद्य उद्धृत किये, जिनमें आत्माराम दूबे को पिता, तुलसी को माता, प्रहलाद उद्धरण अर्थात नरसिंह को गुरु, दीनबंधु पाठक को ससुर, रत्नावली को पत्नी और तारक को पुत्र कहा गया है।

उन्होनें जन्म स्थान रूप में तारी, हस्तिनापुर, हाजीपुर का उल्लेख किया और गुरुधाम रूप में सोरों का, जो विदेशी होने का कारण उनका भ्रम मात्र था।

३६. हिन्दी के अनेक विद्वानों ने सोरों का समर्थन किया है उनमें, डा० धीरेंद्र वर्मा डा० दीनदयाल गुप्त, प० रामनरेश त्रिपाठी, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि उल्लेखनीय हैं।

३७. सोरों में अंतर्राष्ट्रीय तुलसी स्मारक न्यास तुलसी पीठ, मानस मंदाकिनी सेवा संस्थान आदि अनेक संस्थाए हैं, जो तुलसी के सोरों निवासी होने का अभियान चला रही हैं।

३८. 'तुलसी जन्मभूमि, एक मौलिक चिंतन' नामक पुस्तक मे प्रेमनारायण गुप्त ने भाषा और लिपि प्रवृत्ति तथा व्याकरण के सहारे यह सिद्ध किया है कि तुलसी सोरों में पैदा हुए और ३६ वर्ष तक वहीं रहे।

३६. मानस टीका (भगवान प्रसाद ज्वालाप्रसाद, नारायण मिश्र आदि) में सोरों पक्ष का समर्थन किया गया है।

४०. 'वरवै रामायण' में एक पंक्ति है– 'जो पहुचावै रामपुर तन अवसान'। इसके आधार पर रामपुर-सोरो को तुलसी जन्मस्थली सिद्ध किया जा रहा है।

४१. सोरों पक्ष ने विधिवत पीएच०डी० शोध प्रबध लिखवाकर यहाँ की जन्मस्थली का उद्‌घोष किया है।

निष्कर्ष यह है कि सोरों विषयक सामग्री का गहन परीक्षण अभी शेष है। इस पक्ष ने बड़े श्रम के साथ सामग्री सँजोयी है। इनके पास वक्ताओं और लेखकों की अच्छी टीम है। इन्होंने अनेक संस्थाएँ समय समय पर खोली हैं। आज भी सर्वाधिक विद्वानों तथा अभिलेखों की सूची इनके पास है, किन्तु इतने सुनियोजित अभियान तथा विगत चालीस वर्षो के परिश्रम के बावजूद जनमत इनके पक्ष में नहीं आ पाया है, इसलिए इनके लेखन में अब क्षोभ व्यक्त होने लगा है। इसका नवीनतम प्रमाण है पं० वेदव्रत शास्त्री द्वारा प्रकाशित खुला पत्र, जिसमें तर्क कम हैं और अपशब्द अधिक।

यही स्थिति राजापुर 'तुलसी के गाथा' नामक स्मारिका की भी है। अस्तु! जन्मस्थली विषयक सामग्री का सूत्रबद्ध चिन्तन अपेक्षित है।

राजापुर (गोण्डा) का पक्ष

इस पक्ष की विशेष चर्चा अभी दो दशकों से आरंभ हुई है। पसका एक पुराना ताल्लुका और जिला गोण्डा का एक प्रसिद्ध कस्बा है, जहां घाघरा और सरयू का संगम हुआ है। इसको क्षेत्रीय जनता 'तिमुहानी' कहती है। गोस्वामी जी ने एक प्रसंग में तिमुहानी का नामोल्लेख किया है – "सकल पाप नाशक तिमुहानी।" पसका में संगम तट पर एक आश्रम है, जो 'नरहरिदास की कुटी' के नाम से विख्यात है। यहां बाराह भगवान का एक प्राचीन मदिर है, जिसमे पहले अष्ट धातु की एक भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठित थी। तस्करों से बचाकर उसे आज गोण्डा पुलिस लाइन में सुरक्षित रख दिया गया है। उसका वाद न्यायालय मे विचाराधीन है। पसका से ८ कि.मी. की दूरी पर बाराही देवी का मंदिर है। यहा से ६ कि.मी. की दूरी पर राजापुर नामक गाँव है, जहां तुलसी स्मारक के नाम पर एक छोटा सा मन्दिर बना हुआ है। उसके निकट ही लगभग ६ एकड के क्षेत्रफल की एक गोचर भूमि है, जिसको 'आत्माराम का टेपरा' कहा जाता है। इस स्थान को गोस्वामी जी की जन्मभूमि के रूप में प्रस्तुत करते हुए अनेक तर्क दिए जा रहे है–

१. 'आत्माराम का टेपरा' गोस्वामी के पिता आत्माराम दुबे की अचल सम्पत्ति है। इसे ग्राम राजापुर की इन्तखाब खतौनी में सन् १४०१ से "आत्माराम टेपरा तहसील करनैल गंज (तुलसी बन)" के रूप में अंकित किया गया है। वन विभाग ने इधर उसमें वृक्षारोपण करा दिया है। इसके पूर्व जनश्रुति के अनुसार यह गोचर भूमि पीढी दर पीढ़ी 'आत्माराम टेपरा' के रूप में जानी जाती थी। तुलसी के पूर्वजों की किसी अचल सम्पत्ति (घर, जमीन) आदि का अन्य कोई साक्ष्य किसी दूसरे पक्ष के पास नही है।

यह अभिलेख परवर्ती और प्रायोजित लगता है।

२. जिलाधिकारी श्री रामचंद्र टकरू, श्री सदाकांत जी, श्री नवीन सहगल आदि ने तुलसी जन्मभूमि के रूप में राजापुर की घोषणा की है और स्मारक निर्माण की शुरुआत भी।

३. यह जनश्रुति है कि तुलसी की माता हुलसी घनेर मिश्र, पुत्र जगतनारायण

मिश्र, निवासी दहौंडा ताल (दधिवल कुण्ड) जिला बहराइच की निवासी थी। इससे सिद्ध हो जाता है कि तुलसी इसी क्षेत्र में जनमे थे।

४ जनश्रुति है कि माता के निधन के बाद तुलसी का पालन चुनिया नाम की दासी ने किया था, जो यहीं के निकटवर्ती गॉव हरिपुर (जिसे कहीं–कहीं रामपुर भी कहा गया है।) की रहने वाली थीं। गोस्वामी जी के एक बरवै में' जो पहुँचावै रामपुर तन अवसान'' में इसी का उल्लेख है।

'मानस' में भी अयोध्या को भी 'रामपुर' कहा गया है –'पहुँचे दूत रामपुर पावन।' स्पष्ट है कि रामपुर (अयोध्या) से उनका जन्मजात संबंध था।

इस जनश्रुति की पुष्टि अपेक्षित है।

५. यह प्रसिद्धि है कि तुलसी के पूर्वज बॉसडीह, मझौली, जिला देवरिया के निवासी थे। वहां अकाल पड़ेने पर वे राजापुर आ गये थे। वे सरयूपारीण पुरोहित ब्राह्मण थे और बाराही देवी के मन्दिर के पुजारी थे।

यह राजापुर– कहाँ का है? इसकी खोज अपेक्षित है।

६. यह भी कहा जाता है कि राजापुर के ३ किमी० की दूरी पर स्थित गॉव कचनापुर के निवासी दीनबन्धु पाठक की पुत्री रत्ना से तुलसी का विवाह हुआ था। आज भी वहाँ कई पाठक परिवार हैं।

यह मत तुलसी के आत्मकथ्य के विपरीत है, अतः अमान्य है।

७. गोस्वामी जी ने पड़ोसी जिला बहराइच का उल्लेख दोहावली की इन पक्तियों में किया है –

लही आँख कब आंधरो बाँझ पूत कब पाय।
कब कोढ़ी काया लही, जग बहराइच जाय।।

यह उक्ति बहराइच के आकामक सालार मसऊद गाजी की कब्र से सम्बंधित जन आस्था पर व्यंग्य रूप मे प्रस्तुत की गयी है। इसके आधार पर दावा किया जाता है कि गोस्वामी जी पडोसी जिला गोण्डा के रहने वाले थे।

किंतु इसके सहारे निश्चित जन्मभूमि का निर्णय नहीं हो सकता।

८. कुछ विद्वानों ने बाराबंकी की व्युत्पत्ति बाराह बन, पसका की व्युत्पत्ति पशु अर्थात् वाराह , घाघरा की व्युत्पत्ति घुरघुर अर्थात् वाराह ध्वनि से खोजते हुए यह स्थापित किया है कि यह क्षेत्र मूलतः शूकर क्षेत्र था।

किन्तु जन्मस्थली का प्रश्न पृथकतः विचारणीय है।

९. गोस्वामी जी ने 'मानस' की प्रस्तावना में अपने एकमात्र आत्मकथ्य मे सूकरक्षेत्र का नामोल्लेख किया है—

मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सु सूकर खेत।
समुझी नहिं तस बालपन, तब अति रह्यौं अचेत।
जदपि कहीं गुरु बारहिं बारा। समुझि परी कछु मति अनुसारा।।

बालकाण्ड दोहा ३०

इसके अनुसार कुछ विद्वानों का तर्क हैं कि इसी सूकरखेत में स्थित नरहरि आश्रम में गोस्वामी जी ने पहली पहली बार रामकथा सुनी थी। निश्चय ही उनका सकेत बाल्मीकि रामायण की ओर है, जिसका वाचन/पारायण नरहरिदास जी नियमित रूप से श्रोताओं, भक्तों के मध्य करते रहे होंगे। गोस्वामी जो ने कई बार यह कथा सुनी है, अर्थात् कई कई महीने रुककर इसका श्रवण किया है। इसे उन्होंने वाल्यावस्था में सुना था। बाल्यावस्था में और उस युग में जबकि आवागमन के साघन बहुत कम थे, किसी दूर स्थान से चलकर तुलसी का आना सभव नहीं लगता । इस तर्क के सहारे पसका के पक्षघर विद्वान तुलसी को यही (राजापुर में) उत्पन्न मानते हैं।

यह प्रतीतिमात्र है। इसकी पुष्टि अपेक्षित है।

१०. वर्तमान पसका कस्बा अयोध्या से ४० कि० मी० उत्तर–पश्चिम मे स्थित है। प्राचीन ग्रन्थों में अयोध्या से इसकी दूरी ३ योजन बतायी गयी है। अयोध्या की ८४ कोस की परिक्रमा में पसका भी सम्मिलित है। यहां प्रतिवर्ष एक माह का बड़ा भारी पौष मेला लगता है, जिसमें लाखोंकी संख्या में लोग सरयू स्नान करते हैं और अनेक भक्त कल्पवास करते हैं ।

स्थान का माहात्म्य सिद्ध है, केवल जन्मस्थली का स्पष्टीकरण शेष है।

११. शिवसिंह सेंगर तथा गोण्डा गजेटियर के अनुसार तुलसी के शिष्य सखा वेणी माधवदास इसी पसका के निवासी थे। वे तुलसी के सन्निकट थे। तभी वे जीवनी लिख सके।

यों जीवनी ग्रामवासी के अतिरिक्त दूरस्थ व्यक्ति भी लिख सकता है।

१२. बोलपुर चौबीसी में होलराय और तुलसी के लोटे की एक जनश्रुति बहुत अरसे से प्रचलित है । यहीं के अनीराय को तुलसी–सखा कहा गया है। अकबरी दरबार के अनीराय के सम्बन्ध में एक उल्लेख प्राप्त होता है—'इलाकाये पसका

ाये अवध दरियाये सरयू के नजदीक वाकय है।' इनका तुलसी से घनिष्ट
ध रहा है। इसके आधार पर कुछ विद्वानों ने सिद्ध किया है कि तुलसी के
जन परिजन जब इस क्षेत्र मे सर्वत्र फैले हुए हैं तो तुलसी भी यही के रहने वाले
ाणित होते है।

यह अनुमान जनश्रुति सापेक्ष है।

१३. राजापुर में 'रामचरितमानस' की एक प्राचीन हस्तलिपि सुरक्षित हैं,
सके प्रतिलिपिकार हैं आनन्द राम और जिसका लेखन काल है (१८८४ वि०) इसे
छ लोग तुलसी लिखित कहते है।

किन्तु यह भी जन्मभूमि का साक्ष्य नहीं।

१४. राजापुर में एक हनुमत मूर्ति है, जो तुलसी द्वारा प्रतिष्ठित कही जाती
उसके निकट एक तुलसी कूप (कूँआ) भी द्रष्टव्य है।

किन्तु यह भी जन्मभूमि का साक्ष्य नहीहो सकता

१५ पसका के नरहरि आश्रम मे स्थित वटवृक्ष को तुलसी द्वारा रोपित कहा
रहा है। यहां तुलसी वन–वाटिका भी हैं।

इसका भी जन्मभूमि से सबन्ध नही है।

१६. डॉ० रामअवध सिंह द्वारा 'नवभारत टाइम्स' में प्रकाशित १८ मार्च
,८ के एक लेख में नेपाल से प्राप्त पाण्डुलिपि का उल्लेख किया गया है,
समे राजापुर को सूकरखेत में स्थित बताया गयाहै। इस खोज से जुड़े हुए लेख
दम्बिनी (अगस्त १९९८) आज (दैनिक) ६ जुलाई १९९२ और राष्ट्रधर्म १९९२ में
प्रकाशित हुए हैं।

विद्वानों को इसकी प्राभाणिकता पर संदेह है, क्यों कि इसमें 'पुष्पिका'
ी हे और हुलसी के आगे "श्रीमती" लिखा हुआ है।

१७. तुलसी किसी न किसी बहाने अवध का बारम्बार स्तवन करते रहे हैं।
के लिए वह वैकुण्ठ से ज्यादा प्रिय है। जन्मभूमि रूप में वे बराबर उसे याद
ते है।

यह परोक्षत: कवि का ही जन्मभूमि–प्रेम है।

१८. पसका के पक्षधर विद्वानों का तर्क है कि गोस्वामी जी ने अधिकांश
व्यकृतियॉ अवधी भाषा में लिखी हैं, विशेष रूप से आरंभिक कृतियॉ ठेठ
धी में हो रची हैं। बुन्देली में उनकी कोई काव्य रचना नही है। उन्होंने ब्रजभाषा

में जो काव्य रचनाएँ की हैं, वह भी मानक काव्य भाषा है, न कि आगरा मथुरा की बोली। गोस्वामी जी की कृतियों मे ऐसे सैकड़ों शब्द प्रयुक्त हुए है, जो ठेठ देशज शब्द हैं और केवल इसी अवध क्षेत्र में बोले जाते हैं।

किन्तु शब्द प्रयोगों के आधार पर जन्मभूमि का दावा नहीं किया जा सकता।

१६. गोस्वामी जी को एक महत्त्वपूर्ण कृति है 'रामलला नहछू'। इसमें जिस नहछू का वर्णन किया गया है, वह पूर्वान्चल की ही एक प्रथा है।

इसके सर्वेक्षणगत साक्ष्य अपेक्षित है।

२० तुलसी से सम्बधित एक जनश्रुति है– "तुलसी घर मरघट्ट में गलकटियन के पास।" इसको लेकर पसका वाले राजापुर के पास भौरीगंज के चिकवो की बस्ती का संकेत करते हैं।

इसे जनश्रुति ही माना जा रहा है ।

२१. कई प्राचीन 'मानस' –टीकाओं में सूकरक्षेत्र को पसका के निकट कहा गया है। मानस के प्रथम टीकाकार रामचरण दास ने १८८० विक्रमी में 'गरुसन सुनी' का अर्थ पसका से ही निकाला है। इसी की पुष्टि जानकीदास ने मानस रामायण प्रचारिणी टीका (नवलकिशोर प्रेस लखनऊ १६४० पृ० १२४) में की है। यही उल्लेख सत उन्मनी की टीका १८८६ पृ० २०४ में हुआ है।

कठिनाई यह है कि इन टीकाओं में तीनों स्थानों के उल्लेख हैं।

२२ कृष्णदत्त मिश्र कृत 'गौतमचंद्रिका' में पसका को अयोध्या की ८४ कोसी परिकमा में गिना गया है।

किन्तु प्रश्न निश्चित गांव के प्रमाण का है।

२३. रघुवरदास कृत 'तुलसी चरित' में भी सूकरखेत का ऐसा ही उल्लेख है।

किन्तु आवश्यकता स्पष्ट प्रमाणो की है।

२४. अनेक विद्वानों के अनुसार 'मूल गोसाईं चरित' वस्तुत गोसाईं चरित का प्रक्षिप्त रूप है। इसमें वसिष्ठकुण्ड, अयोध्या के निवासी मानस मर्मज्ञ श्री विन्दु विनायक द्वारा रचित अंश प्रकाशित है, न कि बेणी माधव के द्वारा रचित। इसके पीछे अयोध्या के अखाडों की नीति कार्यरत रही है।

इसे सिद्ध करना होगा।

२५. हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों में अनेक लेखकों ने तुलसी और पसका का सम्बन्ध स्वीकार किया है। इनमे प्रमुख हैं पं० चन्द्रबली पाण्डेय, कुँवर

चद्र प्रकाश सिंह, डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी , प्रो० हरिकृष्ण अवस्थी, डॉ० जगदीश गुप्त, डॉ० भगवदाचार्य, महन्त फलाहारी जी, देवरहा बाबा, लक्ष्मण किलाधीश जी, महंत द्वारका दास, श्री रामकिंकर जी आदि।

किंतु जन्मस्थली विशेष का अकाट्य प्रमाण इनमे कोई नही दे सका है।

२६. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी यह घोषित किया है कि असली सूकरखेत सोरों का नहीं, गोण्डा का है। उनके शब्दों में "सारे उपद्रव की जड़ है सूकरखेत, जो भ्रम से सोरों समझ लिया गया। सूकर खेत गोण्डा जिले में सरयू के किनारे एक पवित्र तीर्थ है, जहॉ आसपास के कई जिलों के लोग स्नान करने के लिए आते हैं और मेला लगता है।"

विडम्बना यह है कि इसके बावजूद शुक्ल जी ने राजापुर (बांदा) का समर्थन नही किया।

२७. कुछ विद्वानो की खोज के अनुसार पडोस के गॉव मे तुलसी की ननिहाल थी।

यह पूरा प्रकरण ही अमान्य है।

२८. तुलसी ने स्वयं को एक स्थल पर सुरसरि तीरवासी कहा है। यह स्थान कुछ विद्वानों के अनुसार काशी न होकर अयोध्या है। सरयू नदी को यत्र तत्र गंगा भी कहा गया है। बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार साकेत नगरी गंगा के तट पर स्थित थी। इसे त्रिलोदकी नाम दिया गया है। अयोध्या के पास तिलोकी नाले से भी इसका सम्बन्ध जोडा जाता है।

इस कथन के पीछे कूट तर्क मात्र हैं।

२६. पसका निवासी शाण्डिल्य गोत्रज नरहरि के अस्तित्व को लेकर भी कई विवाद हैं। वाजिबुल अर्ज और जिला बन्दोबस्त १८७४ ई० के अनुसार पसका के संस्थापक थे तुझारशाह । इस राजवंश के पास १४ गॉव और ६ पट्टी थी। गोण्डा जिला बनने के पूर्व यह खीर रसा राज का अंग था। १६४८ में कालापहाड ने इस पर कब्जा किया । यहॉ नरहरि को मुआफी प्राप्त थी। यह भी कहा जाता ह कि नरहरि दास नाम के कोई महात्मा तुलसी के समकालीन नहीं थे। कश्मीरी ब्राह्मण आनन्द द्वारा लिखित मानस की प्रति (१८४४) में आश्रम परम्परा मे नरहरि को १८ वे कम मे रखा गया है जो तुलसी के परवर्ती सिद्ध होते हैं। उसमें ८ वें नम्बर पर तुलसीदास भी हैं। कहा जाता है कि इसकी मूल प्रति वहां से गायब

हो गयी है। यह भी दावा किया गया है कि श्री अवध नारायण सिंह को प्राप्त नेपाल वाली कृति में नरहरि का सही उल्लेख है। पसका मे स्थापित वाराह मदिर से नरहरि दास का सम्बन्ध बताया जाता है। वहां के तत्कालीन राजा धौकत सिह ने मंदिर की पूजा अर्चना के लिए इन्हे एक अच्छी वृत्ति दी थी। कही कही नरहरिदास को रामानन्द के प्रमुख शिष्य अनन्तानन्द का शिष्य कहा गया हैं। वे तुलसी से बहुत पहले हुए हैं। वही रामानन्दी सम्प्रदाय में गुरु नरसिह दास का उल्लेख मिलता है, जिनका तालमेल तुलसी के बाल्यकाल से बैठ जाता है। गोसाई चरित में इन्ही की ओर संकेत है। ''कृपासिन्धु नररूप हरि' लिखकर गोस्वामी जी ने उन्हीं की पद वंदना दी है। पसका में अग्रदास का अखाड़ा अभी शेष है। अग्रदास जी नरसिंह दास के गुरु थे, जो राजस्थान में दैवासा की गद्दी पर रह रहे थे। 'भक्तमाल' में नाभादास ने स्वयं को और नरसिंह दास को अग्रदास का शिष्य बताया है। इन तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि नरहरिदास का सम्बन्ध सूकरखेत से और तुलसीदास से रहा अवश्य होगा।

अभी इन तर्कों की पुष्टि शेष है।

३०. यह भी तर्क दिया जाता है कि तुलसी सरयूपारीण ब्राह्मण थे। यह उपजाति पूर्वी उत्तर प्रदेश में अधिक पायी जाती है।

यों हर जाति हर जगह न्यूनाधिक मिल जाती है।

३१. एक जनश्रुति के अनुसार तुलसी का यह आत्मकथ्य है – 'तुलसी तहॉ न जाइये जहॉ जनम को गॉव। गुन अवगुन देखें नहीं धरैं तुलसिया नॉव।' वस्तुत तुलसी की जो कदर्थना उनके वाल्यकाल में उनके गॉव जवार मे हुयी थी, उस पर विचार करते हुए यह कथन अस्वाभाविक नहीं लगता। ऐसा प्रतीत होता है कि 'जनम के गॉव' के प्रति मन मे वितृष्णा भी थी, साथ ही यह लालसा भी कि मरने पर उनका यह शरीर उस गॉव में अवश्य पहुँचा दिया जाय।

३२.इस अंचल में तुलसी नामधारी व्यक्ति बहुलता से पाये जाते हैं। नामो के साथ प्यार या तिरस्कार से 'या' प्रत्यय लगाने की प्रथा भी पूर्वांचल में बहुत है जैसे–बेटी को बिटिया, मुरली को मुरलिया। इस प्रकार 'तुलसिया' नाम काफी सकेत भरा लगता है, किन्तु इससे स्थान विशेष की पुष्टि नहीं हो रही हैं।

३३. अनेक विद्वानों ने स्थानीय लोक संस्कृति और देशज शब्दावली को उद्धृत करके तुलसी को अयोध्या के निकट उत्पन्न सिद्ध करना चाहा है। इनकी

शब्दावली पर पृथक् रूप से विचार करना उपयुक्त होगा।

इसके लिए सघन भाषा भौगोलिक सर्वेक्षण अपेक्षित है।

३४. यह भी तर्क दिया गया है कि गुरु नरहरि के साथ ही तुलसी पंचगंगा घाट पर स्थित रामानन्दी पीठ के पूर्व गुरु शेष सनातन के सान्निध्य में पहुँचे और वहाँ १५ वर्षों तक स्वाध्यायरत रहे। शेष सनातन जी को शंकराचार्य के सर्वसिद्धान्त सग्रह का टीकाकार और मधुसूदन सरस्वती का सामयिक विद्वान माना गया है। नरहरि उनके आत्मीय थे।

इस कथन का संबन्ध जन्मभूमि प्रसंग से नहीं है।

३५. गोस्वामी जी का एक आत्मकथ्य है– 'राजा मोरे राम राजा अवध शहरु है।' इसके आधार पर कुछ विद्वानों ने गोस्वामी जी को अयोध्या की प्रजा माना है।

यह तथ्य पुनः परीक्षणीय है।

३६. इस पक्ष के समर्थकों का तर्क है कि 'भक्तमाल' के प्राचीन संस्करण मे राजापुर बॉदा को तुलसी–जन्मस्थान नहीं कहा गया है। दूसरी ओर 'शिव सिह सरोज' के पुराने संस्करण में उन्हें पसका गोण्डा निवासी माना गया है।

३७. यह भी तर्क है कि बिन्दु जो के शिष्य भवानीदास ने गोसाईं चरित १८०८ वि० (१७५१ ई०) में पसका को सूकरखेत कहा है। इसका पहला दावा डॉ० भगवती प्रसाद सिंह ने इन पंक्तियों को उद्धृत करते हुए किया – 'दुतिय वास आवास किय पावन सूकर खेत। त्रय योजन जे अवध ते दास दरस सुख हेत। षट योजन है अवध ते पसका सो परमान! बास कछुक दिन करि तहाँ चरचा वेद–पुरान।'

इनकी प्रामाणिकता अभी विचारणीय है।

३८. कुछ शोधकों नें तुलसी की एक वंशावली प्रस्तुत की है, जिसके अनुसार तुलसी के प्रपितामह थे सुखनन्दन दास और पितामह थे रामचरन तथा श्रीराम। वंशावली में इनके चार पुत्र बताये गये –

१. आत्माराम २. विश्वनाथ ३. रामचरन साधु ४. छंगा।

इनमें आत्माराम के पुत्र हुए तुलसीदास और विश्वनाथ के पौत्र प्रपौत्र हुए रामप्रसाद जानकी बाबा रामतीरथ आदि, जिनके वंशज अभी राजापुर गोण्डा क्षेत्र मे निवास कर रहे हैं।

किंतु जन्मभूमि हेतु अपेक्षित है--पूर्वजों का प्रमाण।

३९. तुलसी जन्म स्थली के एक शोधक रहे हैं आचार्य चन्द्रबली पाण्डे। उन्होंने गोस्वामी जी के आत्मकथ्य--'तुलसी तिहारो घरु जायो है घर को' के आधार पर फैजाबाद (अयोध्या) को उनकी जन्मस्थली घोषित किया है क्यों कि तब गोण्डा जिला नही बना था।

यह कथन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

४०. पसका गोण्डा का प्रथम संकेतक मानस टीकाकार रामचरण दास करुणा सिन्धु को माना गया है और इस पक्ष के अब तक का सबसे प्रभावी स्वर रामकिंकर जी का कहा जा सकता है। इनके अतिरिक्त श्री रामानन्दाचार्य, श्री रामचन्द्र दास परमहंस, श्री प्रेमदास रामायणी, श्री फलाहारी महाराज, री सीताराम शरण, श्री नृत्यगोपाल दास आदि अयोध्या के संतों ने इस पक्ष की कमोवेश पुष्टि की है।

ये तर्क सहायक तो है, किन्तु जन्मभूमि के निर्णायक नहीं।

४१. यह भी तर्क दिया जाता है कि तुलसी के खानदानी राम दुबे और उनका परिवार अभी इस क्षेत्र में बरकरार है। उनके परिजन अभी श्राद्ध पक्ष मे तुलसी के नाम तर्पण करते हैं और हर मांगलिक आयोजन के पूर्व 'सॉझ' मानते हुए विशेष रूप से मातृपितृ तैल पूजन के अवसर पर लोकगीतो में आत्माराम और तुलसी का नाम ढालकर उनका आवाहन करते हैं।

इसका सर्वेक्षण परीक्षण आवश्यक है।

४२. तुलसी जन्मभूमि विवाद का गहरा सम्बन्ध 'मूल गोसाई चरित' से है। डॉ० माता प्रसाद गुप्त के अनुसार इसका जो संस्करण गीता प्रेस से १६३४ मे प्रकाशित हुआ है, वह अप्रामाणिक है।

आवश्यकता असली 'गोसाई चरित' की खोज की है।

४३. कुछ विद्वानों का तर्क है कि 'घट रामायण' की मान्यता को परिपुष्ट करने के लिए इसमें राजापुर बॉदा का विवरण भरा गया है। 'गोसाई चरित' मे राजापुर का उल्लेख नही है, जबकि अवध खण्ड विस्तार पूर्वक दिया गया है।

वेणी माधव दास ने लिखा था --

कहत कथा इतिहास बहु आये सूकरखेत।
संगम सरयू घाघरा सत जनम सुख देत।।

इससे अनेक विद्वान तुलसी को वहीं के आस–पास किसी गाँव में उत्पन्न मानने लगे हैं।

इसे सिद्ध करने के लिए प्रमाण चाहिए।

४४. कुछ विद्वानों ने यह तर्क दिया है कि तुलसी ने स्वयं को श्रीराम का सगोत्रीय घोषित किया है–

'साहब की गोत गोत होत है गुलाम को '

प्राप्त प्रमाणों के अनुसार श्रीराम भरद्वाज गोत्रीय क्षत्रिय थे। तुलसी का जन्म जिस दुबे वंश में बताया जाता है, उसमें भी भारद्वाज गोत्री ब्राह्मण पाये जाते हैं।

यह हेत्वाभास प्रतीत होता है।

४५. श्री महंत गंगादास वैष्णव का मत रहा है कि मानस के श्रेष्ठ वाचक वन्दन पाठक का यह कथन प्रामाणिक है कि तुलसी दास चार हुए है–

''दूजे तुलसी तुलाराम जी मिसिर पेयासी,
देवी पाटन जनम कुटी तुलसीपुर वासी।

उक्त शोध से सम्बन्धित एक लेखमाला 'युग धर्म', जबलपुर मे १६५८ में श्री राम किशोर चौरसिया ने प्रकाशित की थी। इस शोध के अनुसार तुलसी ४ हुए हैं। इनमें रत्ना–पति तुलसी और हैं तथा वे मानसकार तुलसी से भिन्न हैं।

इनकी व्यापक शोध–समीक्षा अपेक्षित है।

समाहार

इन समस्त पक्षों–प्रतिपक्षों के आधार पर कोई एक निष्कर्ष नहीं निकलता, किन्तु कई महत्वपूर्ण सूत्र हस्तगत होते हैं। 'मानस' में उल्लिखित जिस तथाकथित 'सूकरखेत' में तुलसी ने जिन गुरु नरहरिदास से जो रामकथा सुनी थी, उसका कोई पुष्ट प्रमाण प्राप्त नहीं है। नरहरिदास, नरसिंह, रामानंदी परम्परा के महन्त बताए जाते हैं, पर उनकी भी स्थिति विवादास्पद है। गोस्वामी जी ने उनका कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है। गुरुजनों का उल्लेख प्रायः किया भी नही जाता था। यो तुलसी ने नरहरि शब्द का कई बार प्रयोग किया है। उन्होने मानस के एक बरवै मे 'कृपा सिंधु नर रूप हरि' अथवा 'नर रूप हर' का जो उल्लेख किया है, वह भी विवादास्पद बना हुआ है।

वस्तुतः सारा विवाद 'सूकरखेत' मे केन्द्रित हो गया है। शूकरक्षेत्र, सूकरखेत और सोरों–तीनों शब्दो की निरुक्ति तथा व्युत्पत्तिगत विकास सम्भव है या नहीं?

यह 'सुकृत्य', सौकरम, सोरम का अपभ्रंश तो नहीं? इसको लेकर भी मतभेद है बहुमत यह है कि सूकरखेत से सोरों नहीं हो सकता है। सूकरखेत का शब्दविच्छेद कुछ पाठों के आधार पर डॉ उदय शंकर दूबे ने किया है। इसका निर्णय मूल प्रतियों की प्रामाणिकता का परीक्षण करके ही किया जा सकता है। निःसन्देह कूट बुद्धि भर गयी हैं इस प्रकरण में । चाहिए सहज बोध और शुद्ध बुद्धि।

मेरा विनम्र मत है कि 'सूकरखेत' के बीज शब्द को सुलझा लिया जाये तो सम्भव है, यह गोस्वामी जी की गुरु भूमि सिद्ध हो जाए। फिर भी जन्मभूमि हेतु आवश्यकता अन्य साक्ष्यो के पडताल की है। तुलसी जन्मस्थली के तीनों दावेदार (राजापुर, सोरों, पसका) परस्पर कुछ मिले-जुले प्रतिस्पर्धी साक्ष्य दे रहे हैं। जैसे-

(१) तीनों स्थानो में नरहरि के आश्रम हैं। सोरों में नरहरि (नृसिंह चौधरी) की कथित पाठशाला, चित्रकूट में नरहरि की गुफा , नरहरि और तुलसी की समाधि और पसका में नरहरि की कुटी। यहाँ नरहरि-तुलसी की मूर्तियाँ स्थापित हैं। पुरानी नहीं, मात्र पिछले ५० वर्षों में निर्मित । अर्थात् ये साक्ष्य जन्मभूमि के स्वतः सिद्ध प्रमाण नहीं है।

(२) उक्त तीनों स्थानें पर कोई न कोई वटवृक्ष या पीपल का पेड है, जिसे तुलसी द्वारा रोपित कहा जाता है। यह वृक्षारोपण तुलसी के यहाँ आने या रहने का प्रमाण है, यहाँ पैदा होने का नहीं।

(३) तीनों स्थानों में तुलसी द्वारा निर्मित मन्दिर और उसमें प्रतिष्ठित हुनमत मूर्ति बताई जाती है। यह भी जन्मभूमि का अकाट्य प्रमाण नहीं है। संभव है, ये कर्मभूमि हों, जहाँ तुलसी ने अपने आराध्य की प्रतिष्ठा की हो; उसी प्रकार जैसे संकटमोचन (काशी) की स्थापना उन्होंने की थी।

(४) इन तीनों स्थानों पर 'मानस' की तथाकथित हस्तलिखित प्रतियाँ रखी हुई है। दावा यह है कि ये तुलसी द्वारा लिखित हैं। ये प्रतियाँ तो सौ दो सौ वर्ष पुरानी ज्ञात होती हैं। फिर भी विवाद किए बिना यदि उन्हें तुलसी की हस्तलिखित प्रति मान लिया जाए तो भी इनसे जन्मभूमि नहीं स्थिर की जा सकती। किसी का हस्तलेख कहीं भी पहुँच सकता है। इनकी तस्करी विदेशों तक होती रहती है। पाण्डुलिपि का कहीं होना जन्मभूमि का अनिवार्य साक्ष्य नहीं बन सकता।

(५) तीनों स्थानों के निकट तुलसी की ननिहाल-ससुराल कही जा रही है। उसके नाम अलग-अलग हैं। 'राजापुर' के निकट तारी महेवा है, सोरों के निकट

बदरिया' है और 'पसका' के निकट 'कंचनापुर' है।

(६) इन तीनो स्थानों पर तुलसी की मूर्तियाँ बताई जा रही है। राजापुर ओर सोरों की मूर्तियाँ तो परस्पर बहुत मिलती–जुलती (ट्रू कापी) सी है। यह भी कहा गया है कि राजापुर की मूर्ति में तिलक की छाप रामानन्दी नही है। यह मूर्ति तुलसी की नहीं, बल्कि राजापुर के सस्थापक राजासाधु की है। यों किसी भी महापुरुष की मूर्ति कही भी स्थापित की जा सकती है। मूर्तियाँ केवल जन्मभूमि तक सीमित नही रहती, 'बल्कि देश–देशान्तर तक व्याप्त हो जाती है'।

(७) इन तीनों स्थानों पर तुलसी स्मारक है। उनमें तुलसी जन्मभूमि के शिलालेख हैं। राजापुर में प्रदेश शासन की ओर से, सोरों में साहित्यिक, धार्मिक सस्थाओ की ओर से, पसका में जिलाधिकारियों की ओर से इनकी व्यवस्था कराई गई है। यों तुलसी स्मारक जन्मभूमि के अतिरिक्त कर्मभूमि और गुरु–भूमि में भी बनने चाहिए।

(८) तीनो स्थानों पर कोई–न–कोई खण्डहर खोज लिया गया है और उसे तुलसी का घर कहा जा रहा है। राजापुर से सम्बन्धित विद्वानों का तर्क है कि तुलसी का कच्चा घर यमुना की बाढ में बह गया है। शायद यह 'मिथ' ही हे। सोरों पक्ष के विद्वान् जोगमार्ग का नाम ले रहे है। पसका के निवासी राजापुर गॉव मे आत्माराम का टेपरा' का उल्लेख इधर करने लगे हैं। टेपरा से सम्बन्धित कुछ अभिलेख खसरा–खतौनी में मिलते हैं, किन्तु वे बहुत पुराने नहीं लगते। लगभग ६ एकड़ की इस गोचर भूमि में वनविभाग ने वृक्षारोपण करा दिया है। सोरों तथा राजापुर (बादा) के इन तथाकथित भूखण्डों/मकानों से सम्बन्धित कोई दस्तावेज अभी सुलभ नहीं हो पाया है। आवश्यकता है , तुलसी के पूर्वजों की जायदाद के प्रमाण की । तुलसी राजापुर या चित्रकूट मे वर्षों रहे हैं, इसलिए उनका मकान वहॉ रहा ही होगा। प्रश्न यह है कि तुलसी की जन्मभूमि उनके पूर्वजों की जायदाद के आधार पर ही निश्चित हो सकती है, न कि परवर्ती संपत्ति के आधार पर।

(९) राजापुर– बॉदा के विद्वानों का तर्क है कि तुलसी ने राजापुर या 'दूबन कौ पुरवा' गॉव बसाये थे। कहीं–कही विक्रमपुर का भी नाम लिया गया है।इनका उल्लेख गजेटियरों में हुआ है। यों ये गजेटियर भी जनश्रुतियो पर निर्भर रहे है अतः असन्दिग्ध नही है। फिर भी यह तर्क दिया जा सकता है कि यदि ये गॉव तुलसी के बसाये हुए हैं तो तुलसी की जन्मभूमि कैसे हो सकते है?

(१०) राजापुर में तुलसी के वंशजों / उत्तराधिकारियों को प्राप्त माफीनामें देखाए जाते हैं, किन्तु उनके पूर्वजों से सम्बन्धित कोई माफीनामा यहाँ नही हैं। यह तो निर्विवाद है कि चित्रकूट के निकट वे वर्षों – वर्षों तक रहे हैं। अवश्य ही वहाँ मन्दिर बनवाए होगे। वहॉ उनकी शिष्य–परम्परा भी चली होगी, किन्तु वे बाहर से चलकर नहीं आये थे, वही पैदा हुए थे, इसका कोई अकाट्य प्रमाण राजापुर समर्थकों के पास नहीं हैं। मात्र बादरायण सम्बन्ध और घुणाक्षर न्याय से सत्य का संधान न संभव है, न समीचीन।

(११) राजापुर का तर्क 'मूल गोसाई चरित' घटरामायण आदि के आधार पर उभरा है। बाबा बेनीमाधव पसका(गोण्डा) निवासी थे। इनके नाम से 'मूलगोसाईचरित' प्रकाशित किया गया है, किन्तु इसमें 'गोसाईचरित' का मूल (सारांश) नहीं हैं, बल्कि यह प्रक्षिप्ताशों का संग्रह हैं। अधिकांश विद्वानों ने इसे संदिग्ध घोषित कर दिया है। इसी प्रकार 'घटरामायण' भी अपवादों पर आधारित है। पसका वाले एक 'नेपाली रामायण' का संदर्भ देते है। पर वह अभी तक दृष्टिगत नहीं हुई। क्षेपक बनाने में हमारा कुटीर–उद्योग अग्रणी है। इसने बड़ी हानि की है। तुलसी के जीवनवृत्त से सम्बन्धित और कई कृतियों के संदर्भ दिए जाते है। जैसे – रघुवरदास कृत 'तुलसीचरित', भक्तमाल, रत्नावलीचरित, तुलसीप्रकाश, प्रियादास कृत 'भक्तमाल की टीका' आदि। किन्तु इन सबके साथ इतनी अधिक छेड़छाड़ कर दी गई है कि इन पुस्तकों में लिखित कोई भी तथ्य असदिग्ध नही रह गया है।

(१२) तुलसी–साहित्य के शोधकों–समीक्षकों ने जन्मस्थान को लेकर इतने प्रकार के परस्पर अन्तर्विरोधी अभिमत दिए हैं कि उनमे कोई एक निष्कर्ष नही निकल सकता। इनमें अधिकतर अभिमत प्रायोजित प्रतीत होते हैं।

(१३) राजापुर के प्रसंग मे 'तापस प्रसंग' का उल्लेख किया जाता है। इस बहस मे नहीं पड़ना चाहिए कि यह तापस तुलसीदास ही थे या कोई अन्य? यदि रचनाकार अपनी कृति में कही किसी रूप में आ भी जाता है तो उससे जन्मभूमि का दावा नही सिद्ध होता। निष्कर्ष यह है कि हमें कुतर्कों से बचना होगा, नही तो यह खोज विषयान्तरों में उलझ जाएगी। तीनों स्थानों के पक्षधर अपने–अपने स्थान का माहात्म्य बताते हुए वहीं तुलसी की जन्मभूमि होने का दावा करते हैं। निश्चय ही सोरो–माहात्म्य, चित्रकूट माहात्म्य और अयोध्या माहात्म्य सब को तुलसी ने स्वीकार किया है। यह आवश्यक नहीं है कि सबसे महत्वपूर्ण तीर्थ ही

उनकी जन्मस्थली हो अथवा जिसकी उन्होंने सर्वाधिक प्रशस्ति की हो, उसे ही उनकी जन्मस्थली मान लिया जाए।

(१४) तुलसी—साहित्य मे प्रयुक्त भाषा (अवधी, ब्रज, ब्रजावधी) के आधार पर जन्मस्थली के जो तर्क दिए जा रहे है, यह कहते हुए कि अमुक शब्द अमुक क्षेत्र मे ही बोला जाता है। किन्तु इसे सिद्ध कर पाना दुष्कर है, क्योंकि—

१. आज जो शब्द किसी एक क्षेत्र मे जिस अर्थविशेष में प्रयुक्त हो रहा हे वह ५०० वर्ष पूर्व भी उसी अर्थ मे प्रयुक्त होता था, इसका कोई प्रमाण नहीं हे?

२. इन शब्दो का भाषा भौगोलिक सर्वेक्षण नहीं हो पाया है और निकट भविष्य में भी सम्भव नहीं है। इसलिए यह सिद्ध नहीं हो पायेगा कि अमुक शब्द केवल अमुक स्थान (परिधि) में ही मिलता है। गोस्वामी जी की आधी कृतियाँ अवधी मे है और आधी ब्रज भाषा में। अवधी भाषा पसका मे है और कुछ—कुछ राजापुर में भी । ब्रज भाषा सोरों में है। कुछ विद्वान् उनकी भाषा को 'ब्रजावधी मानते हैं, जो मध्ययुग में पूरे देश में व्याप्त रही है। यह भी स्वेच्छाचारी स्थापना है। वर्षो से भाषाविद् और तुलसी—विशेषज्ञ जिसे अवधी कह रहे थे, उसे 'ब्रजावधी' कह देना बौद्धिक अतिचार ही है। 'रामचरित मानस' वस्तुतः संस्कृतनिष्ठ अवधी में रचा गया है। ठेठ देशज अवधी शब्दों के प्रयोग तुलसी की आरंभिक कृतियो मे बहुत अधिक हुए हैं। इनके आधार पर यह तो सिद्ध किया जा सकता हे कि तुलसी इस भाषा से अवगत थे, पर इससे जन्मभूमि का निर्णय नही हो सकता। एक व्यक्ति एक स्थान पर रहता हुआ कई भाषाओं का प्रयोग करता हे। हममें यदि कोई टकसाली अंग्रेजी बोल लेता है तो उस प्रयोग के आधार पर उसे बिलायत में उत्पन्न नहीं सिद्ध किया जा सकता है। यदि गहन बोली भूगोल और समाजभाषिकी पर आधारित सर्वेक्षण किया जा सकता तो कुछ निर्णय निकाले जा सकते थे। यों हम १०—१५ वर्ष जिस क्षेत्र में रह लेते हैं, वहाँ की शब्दावली ओर लहजा अपना लेते हैं। इस भाषिक संस्कृति के सहारे जन्मभूमि का निर्णय नहीं हो सकता।

(१५) तुलसी—जन्मस्थान से सम्बन्धित अनेक जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं, जैसे— तुलसी घर मरघट्ट में', 'तुलसी तहाँ न जाइए जहाँ जनम को गाँव' आदि। इनके सहारे कोई निर्णय निकालना तर्कसंगत नही होगा। इसके अतिरिक्त अब तक कितने विद्वानों ने किसके पक्ष में अपना मतदान किया है, यह भी तथ्याधार नही

बन सकता, इसलिए कि किसी विद्वान् ने इस पर अधिक श्रम तथा निरसग विवेचन नहीं किया है।

(१६) सोरो पक्ष मे मुख्यतः दो तर्क दिए जाते हैं--

(क) नन्ददास जी तुलसी के भाई थे। उनके वंशज यहीं रहते हैं, इसलिए तुलसी भी यही उत्पन्न हुए होंगे।

(ख) रत्नावली गोस्वामी जी की अर्द्धांगिनी थी। वे विदुषी और कवयित्री थी और यहीं की निवासिनी थीं। बदरिया (ससुराल) के निकट ही कहीं तुलसी का गाँव –घर रहा होगा। वस्तुतः ये हेत्वाभाव हैं। 'दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता 'भक्तमाल' आदि मे नन्ददास सनौढ़िया की कहीं तुलसी का गुरुबन्धु (गुरुभाई) कहा गया है, कहीं चचेरा भाई कहा गया है। नन्ददास के पुत्र कृष्णदास की वशावली, संभव है, प्रामाणिक हो, किन्तु इससे तुलसी के पूर्वजों का वहाँ होना स्वत. सिद्ध नहीं होता। यह भी विचारणीय है कि कुछ कृतियों में नन्ददास को 'पुरबिया' कहा गया है। तथ्य यह है कि तुलसी और नन्ददास मे बडा प्रवृत्ति –भेद रहा है। संभव है, दोनों कभी साथ रहे हों। संभव है, ये कोई दूसरे तुलसीदास हो। संभव है, ये साक्ष्य ही कृत्रिम हों। 'मानस' टीकाकार बंदन पाठक का मत रहा हे कि रत्नावली से प्रबोध पाने वाले तुलसीदास 'मानसकार तुलसी' से भिन्न हैं। उन्होनें ४ तुलसीदास बताए हैं– १. वाल्मीकि के अवतार, 'मानस' सहित १२ ग्रथो के रचयिता तुलसीदास, २. देवी पाटन, तुलसीपुर (गोण्डा) के मुरारी मिश्र (पयासी) के पुत्र तुलसी, जिन्होंने लवकुशकाण्ड, गंगावतरण, जानकीस्तव, दण्डक्षेपक आदि की रचना की। रत्ना इनकी तीसरी पत्नी थीं। ३. सोरों के तुलसीदास गोसाई, जिन्होंने छप्पय रामायण, कुण्डलियाँ रामायण, छंदावली रामायण और कडखा रामायण की रचना की । इन्हें अपनी पत्नी रत्नावली से प्रबोध मिला था। ४. हाथरस वाले तुलसीदास निरंजनी, जिन्होंने 'घटरामायण' की रचना की और स्वयं को तुलसी का अवतार कहा। इन चारों को गड्डमड्ड करके अन्याय किया जा रहा है। दिल्ली विश्वविद्यालय की गोष्ठी मे इस पक्ष का निरसन किया गया, किंतु वहाँ भी कोई अन्तिम सर्वस्वीकार्य विधेयात्मक निर्णय नहीं हो पाया।

वस्तुतः बदन पाठक का यह कथन निराधार नहीं है। इसके पीछे—तुलसी के आत्मकथ्य हैं। तुलसी का स्पष्ट कथन है कि उन्होंने विवाह नहीं किया। उन्हे बेटा—बेटी व्याहनी ही नहीं है। अयोध्या का संत समाज आज भी उन्हे वैरागी

ब्रह्मचारी मानता है। हाँ, यदि हम यह सिद्ध कर दे कि ये कि ये आत्मकथ्य तुलसी के नही है, तो ये तर्क शिरोधार्य होंगे। तात्पर्य यह है कि बहिरसाक्ष्य सोरों, गोण्डा औरा बाँदा किसी पक्ष में नही है, अतः अब अंतःसाक्ष्यों को ही प्रमाण मानना होगा।

(१७) यह तर्क दिया जाता है कि तुलसी ने अवध अचल की सस्कृति का चित्रण किया है– इसलिए उनका यहाँ पैदा होना स्वत सिद्ध है– यह सर्वतोभावेन स्वीकार्य नहीं। कवि को अपनी कथा से संबद्ध देशकाल की समग्र सस्कृति का वर्णन करना होता है। 'मानस' में लंका की भी संस्कृति वर्णित है और अयोध्या की भी। तुलसी अपनी कर्मभूमि की संस्कृति का भी विस्तृत वर्णन कर सकते हैं। अस्तु सास्कृतिक अध्ययन द्वारा भी जन्मभूमि की गुत्थी नहीं सुलझ सकती ।

(१८) तुलसी ने गंगा, सरयू, यमुना – तीनों के निकट निवास किया है। ये स्थान हैं– काशी, चित्रकूट और अयोध्या जहाँ उनका रहना निर्विवाद रूप से प्रमाणित हैं। प्रश्न है –जन्मस्थान का। उन्होंने तिमुहानी का उल्लेख किया है, भले ही वह पसका की तिमुहानी हो, पर वह भी जन्मस्थली का पर्याय नहीं है।

(१९) जन्मस्थली प्रसंग में तुलसी ने कुछ संवाद रखे हैं, जैसे – 'जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि'। किन्तु ये पात्रों के कथन हैं, तुलसी के आत्मकथ्य नहीं।

(२०) कहा गया है कि गोस्वामी (गोसाई) जाति राजापुर के आसपास अधिक है, सनाढ्य सोरों के पास और सरवरिया गोण्डा के पास अधिक हैं। शायद तुलसी नामधारी भी इधर अधिक हैं। ज्ञातव्य है कि तुलसी गुसाई जाति के नही थे। यह तो उनका पद था। फिर हर जाति और हर नाम के लोग हर क्षेत्र में मिल जाते हैं। अतः यह तर्क भी अमान्य है।

(२१) पसका पक्ष का तर्क है कि पहले यह क्षेत्र अयोध्या में था, क्यो कि यह ८४ कोसी परिक्रमा में आता है। तुलसी यहीं पैदा हुए थे। निकाले जाने पर माँगि के खाइबो मसीत को सोइबो' के अनुसार उन्होंने बाबरी मस्जिद को शरणस्थली बनाया। किन्तु यह भी तर्क ही है, तथ्याश्रित साक्ष्य नहीं।

(२२) तुलसी ने बहराइच का उल्लेख किया है, पर यह भी जन्मस्थली का अकाट्य प्रमाण नहीं है । उन्होने अनेक स्थानों का नाम लिया है। इतना सिद्ध है कि वे बहराइच से परिचित थे। यहाँ के निकटवर्ती ग्राम हरिपुर रामपुर को तुलसी की पालनकर्त्री चुनियादाई का गाँव बताया गया है, किन्तु इसका भी पुष्ट प्रमाण नही मिल पाया है

(२३) विद्वानो ने इन स्थानों को लेकर बड़े–बड़े पोथे लिख डाले है– सैकड़ो ग्रंथ और निबन्ध। सबने प्रामाणिकता का दावा किया, किन्तु जब लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा जनवरी, सन् १९९७ मे आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में देश भर के लगभग २५० तुलसी विशेषज्ञों के समक्ष उन्हे प्रमाणो सहित आहूत किया गया तो कोई भी पक्ष एक ठोस प्रमाण (पट्टा, परवाना, माफीनामा, इन्तखाब, दाखिलखारिज (रिवेन्यू रिकार्ड) यानी ऐतिहासिक साक्ष्य माननीय न्यायमूर्तिद्वय को नही दिखा पाया। सब विषयान्तर करते रहे। केवल सूकरखेत (गुरुभूमि) की रस्साकसी और अवधी शब्दावली – अवध संस्कृति की कसरत। अब शुद्ध बुद्धि और शुभेच्छा के सहारे ही इसका समाधान निकल पायेगा। आवश्यक है कि पहले क्षेत्रीय दुराग्रह को रोका जाये।

(२४) तुलसी जन्म स्थली से जुडे हैं अन्य विवाद, जैसे–माता–पिता एव जन्म–मृत्यु तिथियाँ , प्रामाणिक कृतियाँ आदि। एक विवाद के हल होते ही अन्य समस्यायें भी काफी हल हो जायेगीं, क्योंकि ये परस्पर सम्बद्ध हैं।

पसका (राजापुर) गोण्डा का स्थल निरीक्षण करने पर दो पक्ष प्रकाश मे आयें है–

(क) 'आत्माराम का टेपरा' जो कई वर्षों से तहसील रिकार्ड में दर्ज है।

(ख) वहाँ लोकाचल में प्रचलित लोकगीत, जिनमे आत्माराम और तुलसी का नामोल्लेख होता है। पितृपक्ष में कहीं–कहीं उनका तर्पण भी होता है। सर्वोपरि तथ्य तो यह है कि 'कवितावली' मे तुलसी ने 'तुलसी तिहारो घरु जायो है घरु को' का स्पष्ट उल्लेख किया है। इसका कोई अन्य गूढार्थ एवं प्रतीकार्थ निकालना कुतर्क है। इस छन्द में उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि जब आपने लंका निवासी विभीषण का उद्धार किया, तो मैं तो आपके घर मे पैदा हुआ हूँ और आपके घर का हूँ। यह शुद्ध अभिधा है। उनका एक अन्य आत्मकथ्य है– "राजा मोरे राम राजा अवध सहरु है।" इन कथनों से यह सिद्ध होता है कि उनका जन्म अवध में हुआ था। अयोध्या, (तब उसकी जो भी परिधि रही हो) वहीं से वे सूकरखेत (पसका) गये, फिर काशी गये। यहीं अयोध्या से उनका 'मानस–रचना आरम्भ की। बीच–बीच मे चित्रकूट जाते रहे। उनका अन्तिम जीवन काशी मे बीता। वहीं 'विनय–पत्रिका' की रचना की और फिर अस्सीघाट मे समाधि ली।

तुलसी जन्मस्थली के इस विवाद का समाधान उनके आत्मकथ्यों के सहारे

खाजा जा सकता है। शेष द्रविड प्राणायाम है। यदि अन्य स्थानों मे सबधित तुलसीदासों के प्रामाणिक जीवनवृत्त अलगा दिये जाएँ तो स्थिति पूर्णत स्पष्ट हो जायेगी। इस दिशा मे सघन सर्वेक्षण की आवश्यकता है।

पहली आवश्कता है कि इस दिशा मे प्रमाद न बरता जाए। आज भी यह कुतर्क दिया जाता है कि जन्मभूमि की खोज से क्या लाभ? अर्थात् इतिहास तथा पुरातत्व की कोई उपयोगिता ही नही। जो वशज अपने पूर्वजो की खोज न कर सक उनका जीवन अकारथ नही तो और क्या होगा? हम शोध का दम्भ भरते है, कितु अपने साहित्य के दर्जनों, बल्कि सैकड़ो महत्वपूर्ण कवि–लेखकों के जीवनवृत्त (जन्मकाल, स्थान, वंश, परंपरा, कृतित्व आदि) की खोज नही कर पाए हैं। सर्वत्र "एसा कहा जाता है" जैसा वाक्य दिखायी देता है। यह लज्जास्पद है। फिर तुलसी जैसे विश्वकवि तक की खोज न हो पाए यह तो परम उपहासास्पद है। अस्तु, इन प्रयासो को प्रोत्साहन और सहयोग देने की आवश्यकता है, न कि नजरअन्दाज करने की। यों समस्त विवाद को फिलहाल हल करने का एक ही समाधान है, वह है– तुलसी के आत्मकथ्य पर विश्वास करके शुद्ध सहज बुद्धि से उनकी उक्ति "तुलसी तिहारो घरु जायो है घरु को" का अभिधार्थ ग्रहण करके उन्हे अयोध्या राज्य मे तिमुहानी के निकट उत्पन्न स्वीकार कर लिया जाए।

तुलसी की वास्तविक जन्मभूमि ने उन्हे बचपन में बड़ी यातनाएँ दी थीं। ये नकली जन्मभूमियॉ उनकी पुण्यात्मा को पीड़ित कर रही हैं। अब उसका प्रायश्चित किया जाना चाहिए। इसका एक ही उपाय है– कवि के आत्मकथ्य के अनुरूप जन्मस्थली की खोज और जीवन वृतान्त विषयक अन्य तथ्यों (माता–पिता, गुरु, जन्म–मृत्यु– तिथियॉ, प्रामाणिक कृतियाँ आदि) की प्रमाणपुष्ट जानकारी की प्रतिस्थापना।

तुलसी जन्म स्थली विषयक लेखन :

प्राचीन जीवनी परक ग्रथः

गोस्वामी जी के संबंध में विगत लगभग पाच सौ वर्षो में अनेक जीवनी ग्रथ रचे गये हैं। स्फुट निबंधों की तो कोई गणना ही नहीं है। इनमें महत्वपूर्ण है–

गोसाईं चरित (बेनीमाधव दास) इसकी प्रथम सूचना शिव सिंह सेंगर से मिली थी। सेंगर जी के अनुसार इसके रचयिता बेनी माधव दास पसका (गोण्डा) निवासी थे। उन्ही के साथ रहते थे । सेंगर जी ने उन्हें सन् १५६८ मे उपस्थित बताया है। सेंगर जी के अनुसार इनका निधन सन् १६६६ में हुआ था। कहा जाता है कि गोसाईं चरित की कोई प्रति भरूवा (गया) मे श्री रामचन्द्र तिवारी के पास है। एक प्रति अयोध्या से प्राप्त हुई है, जो अप्रामाणिक मानी गयी है। इसका रचना काल १८४८ के कुछ पूर्व का कहा गया है। इस ग्रंथ मे कोई तिथि उल्लिखित नही है जबकि मूल गोसाईं चरित में कई तिथियो के उल्लेख हैं। तुलसी के निधन की तिथि 'संवत् सौरह सौ अस्सी असी गंग के तीर' इसी के आधार पर लोकप्रिय हुई हे। तुलसी के जन्म स्थान रूप में दोहा संख्या दो में 'जमुना तट रजिया पुर' का नामोल्लेख हुआ है, जबकि कुछ विद्वानो का तर्क है कि राजापुर का नाम १८१३ वि० से शुरू हुआ है। सम्प्रति यह कृति अप्राप्य है।

मूल गोसाईं चरित–भवानीदासः–इस कृति का प्रथम प्रकाशन नवल किशोर प्रेस लखनऊ से १८१० ई० में 'रामचरितमानस' की पद्यात्मक भूमिका के रूप मे हुआ था। डा० माताप्रसाद गुप्त के अनुसार यही मूल गोसाईं चरित है। किंतु अब इस भ्रम का निवारण हो गया है। भवानी दास को शिवसिंह सेंगर ने सं० १५६३ के लगभग उत्पन्न माना है। अर्थात् उन्हें सेंगर जी ने बाबा बेनी माधव दास का परवर्ती कवि कहा है। शायद यही कारण है कि इसमें बेनीमाधव कृत रचना के अनेक अंश सम्मिलित कर लिये गये हैं। इस कृति मे तुलसी के जीवन वृत्त से सबंधित अनेक चमत्कारों तथा कई तिथियों के उल्लेख हैं। इसीलिए यह संदिग्ध ज्ञात होती हैं। बेनीमाधव दास अथवा भवानीदास के नाम रचित मूल गोसाईं चरित' को डा० पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने लगभग ६० वर्ष पूर्व अप्रामाणिक घोषित कर दिया था। कालान्तर में यह रहस्योद्घाटन भी हुआ कि इस कृति की रचना वशिष्ठ मंदिर अयोध्या के बिन्दुविनायक जी के द्वारा की गयी है। अर्थात 'मूल गोसाईं चरित' जो संप्रति गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित है, पूर्णतः प्रक्षिप्त तथा संदिग्ध है।

मूल गोसाई चरित–इस ग्रन्थ का रचयिता श्री बाबा बेनी माधव दास को कहा गया है। यह ग्रंथ जितना प्राचीन है, उससे अधिक विवादित भी। विवादयुक्त उक्ति है– 'जमुना तट दूबन को पुरवा। बस तहं सब जातिन को कुनवा।।

सुकृती सत्पात्र सुधी मुखिया। रजियापुर राजगुरू मुखिया।।'

इसके अनुसार तुलसी में पिता थे पाराशर गोत्रीय आत्माराम दुबे। लेखक के अनुसार बेनीमाधव दास के समय राजापुर का नाम रजियापुर था। किंतु यहा उसका कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। 'मूल गोसाईचरित' में तुलसी–सूर की भेंट का उल्लेख हुआ है। ज्ञातव्य है कि सूरदास की मृत्यु १६२० मे हो गयी थी, इसलिए विद्वानों ने इस भेट को असंभव घोषित कर दिया है। इसी प्रकार इस ग्रथ में तुलसी और मीरा के पत्राचार का उल्लेख हुआ है। नवीनतम शोध के अनुसार मीरा की मृत्यु १६०० में हुई थी। ऐसी स्थिति में यह पत्राचार भी कपोल कल्पित लगता है। 'मूल गोसाई चरित' में तुलसी और केशव (अथवा उनके प्रेत) से भेंट का वर्णन है। ज्ञातव्य है कि केशव के अतिरिक्त जीवनी लेखक ने स्वामी हरिदास, मलूकदास रसखान, बलभद्र, टोडर, रहीम, गग, नाभादास, नन्ददास आदि से भेंट करायी है। जहागीर से भेंट १६७० मे काशी में बतायी गयी है, जो संभव नहीं है। नन्ददास को इसमे 'गुरुबंधु' और 'कनौजिया' लिखा गया है। मूल गोसाईचरित के अनुसार तुलसी के पिता रजियापुर के राजगुरु और मुखिया थे, जब कि तुलसी के आत्मकथ्य के अनुसार 'जायो कुल मंगन' अर्थात् वे याचक कुल में पैदा हुए थे। पुष्पिका के अनुसार ' मूल गोसाई चरित' सं० १६८७ में रचा गया, अर्थात् गोस्वामी जी के निधन के सात वर्ष बाद 'सोलह सौ सत्तासि सित नवमी कातिक मास। विरचेऊ नित येहि पाठ हित बेनीमाधव दास।।'

शिव सिंह सेंगर के अनुसार बेनीमाधव दास तुलसी के ग्रामवासी थे और वर्षों उनके साथ रहे थे। ये स० १६५५ में उपस्थित थे। इनका निधन १६४५ में हुआ था। सेंगर जी के शब्दों मे– एक पुस्तक बेनीमाधव दास कवि उनके ग्राम वासी ने जो इनके साथ रहे, जो बहु विस्तार पूर्वक लिखी है।

वस्तुत. मूल गोसाई चरित के संबंध में मुख्य विवाद लेखक का है। इसके रचयिता बेनीमाधव दास है या भवानीदास ? इसमे बेनीमाधव रचित कई पक्तियॉ मिलती हैं। सेंगर जी ने भवानीदास को १८१० में उपस्थित दिखाया है। तात्पर्य यह हे कि बेनी माधव दास जी भवानी दास जी के पूर्ववर्ती थे। इससे सिद्ध होता हे

कि बेनीमाधव दास कृत 'गोसाई चरित' कहीं लुप्त हो गया और उसके कुछ अशो को लेकर भवानीदास लिखित 'मूल गोसाई चरित' प्रसारित किया गया है। इस कृति में तुलसी के कई चमत्कार वर्णित हुए हैं, जैसे मुर्दे को जिला देना, स्त्री को पुरुष बना देना आदि। वस्तुत ऐसे जादुई चमत्कारों को लेकर 'मूल गोसाई चरित' की रचना की गयी है और बेनी माधव को उसका रचयिता घोषित किया गया है। इसे गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा १९४५ ई० में प्रकाशित किया गया है और इसे भवानी दास के चरित का सारांश कहा गया है। इसमें प्रायः सभी घटनाओं की तिथिया दी गयी हैं, जबकि 'गोसाई चरित' में तिथियां नहीं थी। इसमे जन्म से चित्रकूट मे रामदर्शन तक क्रमबद्ध इतिवृत्त रखा गया है। एक स्थान पर 'सत्यं शिवं सुन्दरम' लिखा गया है, जिससे 'मूल गोसाई चरित' के नकली सिद्ध होने मे अब कोई दुविधा शेष नही रह गयी है।

'मूल गोसाई चरित' में सूकर खेत का इस प्रकार उल्लेख हुआ है:–

'दुतियवास अधवास किय पावन सूकर खेत।
त्रययोजन सो अवध ते दास दास सुख हेत।
जहं श्री गुरु नरसिंह सन सुनी कथा लहि ज्ञान'।।(पृष्ठ १३)

इस कथन द्वारा सूकर खेत में गुरु नरहरि से रामकथा श्रवण की पुष्टि होती है किंतु इस कृति की प्रामाणिकता असदिग्ध नहीं है। स्व० श्री सीता रामशरण जी ने रहस्योद्घाटन किया था कि मूल गोसाई चरित वशिष्ठ कुण्ड अयोध्या के ब्रम्हचारी विनायक द्वारा रचित छद्म लेखन है। विनायक जी ने १९१४ मे तुलसी सभा स्थापित करके 'तुलसी पत्र' शुरू किया था। वे तुलसी जन्म भूमि विवाद मे बहुत सक्रिय थे।

४. रघुबर दास द्वारा लिखित 'तुलसी चरित':–गोस्वामी जी के जीवन वृत्त से संबंधित यह एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। कुछ विद्वानों ने इसे नितांत कपोल कल्पित और अप्रामाणिक कहा है। इसकी खोज का विवरण १९१२ ई. में गुरूदेव नारायण ने 'मर्यादा' पत्रिका में प्रकाशित किया था। इस जीवनी के अनुसार तुलसी के पूर्वज धनाढ्य मारवाड़ियों के गुरु थे। उनके प्रपितामह थे परशुराम मिश्र, जो मझोली, देवरिया के निवासी थे। वे निस्संतान थे। एक बार चित्रकूट जाकर उन्होंने कुछ मनोती मानी। उसके फलित होने, अर्थात पुत्र लाभ होने पर वे राजापुर में बस गये। वहीं चौथी पीढी मे तुलसीदास का जन्म हुआ। कवि ने लिखा–'राजापुर सुख भवन सिधारे।'

इस पुस्तक मे चार खण्ड है – 1. अवध खण्ड २ काशीखण्ड ३. नर्मदा खण्ड ४ मथुरा खण्ड। इस ग्रंथ के अनुसार तुलसी ने तीन विवाह किये थे। तीसरे विवाह म उन्हें ६००० /'– दायज मिला था। उनकी पत्नी रत्नावली कंचनापुर के लछिमन उपाध्याय की पुत्री थीं।

तुलसी चरित की एकाधिक प्रतिया प्राप्त हुई हैं। एक के रचयिता है– रघुवीर सिह (१६६० वि०) दूसरे के लेखक हैं दासान्यदास १६२१ वि०। इन दोनो के कोई विद्वानों ने अप्रामाणिक कह रखा है। यह ध्यान देने योग्य है कि इन जीवनियों मे सोरो, चित्रकूट, राजापुर आदि पर कोई पृथक् अध्याय नहीं है।

५. भक्त माल (नाभादास):–नाभादास के तुलसी का समकालीन माना गया है। दोनो गुरु रामानन्द के शिष्य थे। 'दोसो बावन बैष्णवन की वार्ता' का आश्रय लेते हुए तुलसी को नंददास का अनुज कहा गया है। नाभादास ने तुलसी को बाल्मीकि का अवतार माना है। 'भक्त माल' की रचना १७१५ वि० में बतायी जाती है। नाभादास का प्रारम्भिक नाम नाभाअली या नारायण दास कहा गया है। ये डोम या मेदारा या हनुमान वंशीय साधक थे। पांच वर्ष की अवस्था में नेत्रहीन हो गये थे। एक बार भयंकर अकाल पडा, जिससे पीड़ित होकर इनकी मां इन्हे बनमार्ग में छोडकर चली गयी थीं। इसी मार्ग से अग्रदास आ रहे थे। उन्होने कमण्डल के जल से मूर्च्छित बालक को सचेत किया और अपने आश्रम मे लाकर उसका लालन–पालन किया। माता–पिता द्वारा बालक को त्याग देना उस युग की एक मिली–जुली घटना या कथारुढ़ि लगती है। शायद इन्ही परिस्थितियो मे तुलसी को भी त्याग दिया गया हो और इसी प्रकार नरहरि ने उनकी जीवन रक्षा की हो?

'भक्तमाल' की एक टीका प्रियादास ने की थी। उसमें तुलसी विषयक कई घटनाओं का उल्लेख है, जैसे–पत्नी से प्रबोध, काशी–प्रस्थान, प्रेत–दर्शन रामलक्ष्मण–दर्शन, हत्यारे के साथ भोजन करना, चोरों द्वारा 'मानस' का चुराया जाना, राम लक्ष्मण द्वारा पहरा दिया जाना, बादशाह द्वारा तुलसी को बंदी बनाया जाना, हनुमान द्वारा मुक्त कराना, बादशाह द्वारा क्षमा प्रार्थना करना आदि। स्पष्ट है कि इसमें भी अनेक प्रक्षेप डाले गये हैं, अतः जन्म स्थली प्रसंग में यह भी स्वीकार्य नहीं है। 'भक्तमाल' का एक संस्करण सोरों में प्राप्य है, जिसमे भादों की नदी को शव के सहारे पार करके तुलसी का बदरिया (ससुराल) जाने का विवरण ह किंतु यह प्रामाणिक नहीं लगता।

६. घट रामायण:–इसके रचयिता है हाथरस वाले तुलसी साहिब। वे स्वयं को तुलसी का अवतार बताते हैं। उनकी कृति का रचना काल दिया गया है–१८२० वि०। इनका यह आत्म चरित पर्याप्त संक्षिप्त है। इनके अनुसार १५८६ वि० भाद्र शुक्ल एकादशी, मंगलवार को चित्रकूट से दस कोस दूर एक कान्यकुब्ज ब्राहम्ण परिवार में तुलसी का जन्म हुआ था। सं. १६१४ में स्वतः ज्ञानोदय हुआ। कोई गुरू नहीं मिला। स्वयं प्रभु ही पथ प्रदर्शन करते रहे। इन्होंने काशी जाकर स १६१८ मे काव्य साधना आरंभ की। वहीं सं १६३१ में 'मानस' की रचना की। काशी के पंडितों ने इसका बड़ा विरोध किया। १६८० वि० में गोस्वामी जी की मृत्यु हो गयी। 'घटरामायण' में जनश्रुतियो का इतना संकलन किया गया है कि इसकी पूरी विषय वस्तु सदिग्ध हो गयी है, फलतः पं० परशुराम चतुर्वेदी, डा० पीताम्बर दत्त वड़थ्वाल, डा० माता प्रसाद गुप्त, डा० राम दत्त भारद्वाज आदि ने इसे नितांत नकली कृति घोषित कर दिया। (माधुरी, फरवरी १६४२)

७. भविष्य महापुराण:–इसके अनुसार शंकराचार्य के गोत्रज श्री मुकुन्द ब्रम्हचारी ने 'बाबर द्वारा अयोध्या के भ्रष्ट किये जाने पर अपने बीस शिष्यों सहित अग्निदाह कर लिया था। इन बीस शिष्यों का पुर्नजन्म बीस संतों के रूप में हुआ। श्री धर नाम का शिष्य तुलसीदास के नाम से अवतरित हुआ। कालान्तर में वह पत्नी के उपदेशों से काशी के राघवानन्द का शिष्य हो गया और उसने रामकथा की रचना की। इसमें मानसकार तुलसी को अनपशर्मा का पुत्र और कविराज का पुरवा। (गोण्डा) में उत्पन्न कहा गया है। इन तुलसीदास ने अनीराम की बहिन बुद्धिमती से विवाह किया था और फिर संन्यास ले लिया था। यह कृति भी पूर्ण विश्वसनीय नहीं लगती।

८. दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता :– नंददास की वार्ता–इसके अनुसार तुलसीदास कवि नन्ददास के अग्रज थे। नंददास कृष्ण भक्त थे। उनके गुरु बल्लभ, विटट्लनाथ और गोवर्धन नाथ ने अपनी चमत्कार विद्या द्वारा कृष्णमूर्ति मे राम का स्वरूप दिखाकर और अपने पुत्र और पुत्रवधू में राम–सीता की झलक दिखाकर तुलसी को चमत्कृत कर लिया था। एक स्थल पर यह भीउल्लेख हैकि नददास 'पूरबवासी' थे और रसिक भी। उन्हे मथुरा–प्रवास से लौटाने तुलसीदास ब्रजभूमि गए थे। विद्वानों ने इस कथनो को अप्रामाणिक घोषित कर दिया है।

९. **दोहा रत्नावली।** (रचनाकाल स० १६०४ स स० १६४२ के मध्य) इस पाण्डुलिपि की रचयिता है रत्नावली। इस ग्रंथ की ५ पाण्डुलिपिया उपलब्ध बतायी जाती है। इसमें लिखा गया है कि तुलसी सोरों में उत्पन्न हुए थे, किंतु इसकी प्रामाणिकता भी अभी परीक्षणीय है।

१०. **सूकर क्षेत्र महात्म्य :–** यह स० १६७० वि० मे महाकवि नददास के पुत्र कृष्णदास विरचित कहीं जाती है।

इस पुस्तक की एक प्रति शिव सहाय कायथ के पास है, जो सं० १८७० वि० की है। दूसरी प्रति स० १९२७ वि० में मुंशी देवी सहाय के प्रबध से फिनिक्स प्रेस (लिथो) देहली में छपी थी। इस कृति में कहा गया है।

'बदहुं तुलसीदास, पितु बड़ भ्राता पद जलज।
जिन, निज बुद्धि विलास, रामचरित मानस रच्यो।।२।।

किंतु अभी इस कथन को इदमित्थम् नहीं लिया जा सकता है।

११. **वर्ष फलः**–सं० १६५७ वि० लेखक श्रीरुद्रनाथ, महाकवि नन्ददास के पुत्र कृष्णदास कृत।

पुष्पिका :– 'गुरुवार भानुदत्त शिष्यों उपाध्याय सोमनाथ पुत्रेण रुद्रनाथेन लिखितम्। सं० १८७२ मार्गसिरा कृष्ण ४, पितृवासरे।'

इसमे नंददास को रामपुर के वंश में उत्पन्न लिखा गया है–––

'जाही धाम रामपुर स्याम कीनों तात, स्यामायन स्यामपुर बास सुखदाई है।
सुकुल विप्रबस में विग्य तहा जीवाराम, वासुपुत्र नंददास कीरति कवि पाई है।।'

१२. **अष्टसखामृतः–** (प्राणेश कवि कृत) ग्वालदास की प्रति सं० १८६५ वि०।

महाप्रभु बल्लभाचार्य के समकालीन बृन्दावन निवासी भक्त कवि प्राणेश कृत पंचा मृत के अंतर्गत चतुर्थ अमृत।

इसमें तुलसी को और नंददास का भ्राता कहा गया है––

'राम भगत तुलसी अनुज, नंददास ब्रज प्यास।
दुज सनौढिया सुकुल कवि, कृष्ण भगत अवदात ।।८६।।
रामायन भाषा विरचि भ्राता करी प्रकाश।
देखि रची श्री भागवत, भाषा श्री नददास ।। ६६।।

ये उक्तियां भी 'मिथ' जैसी हैं।

३. **तुलसी प्रकाश** – गोस्वामी तुलसीदास जी के समकालीन उनकी ननिहाल तारी के निवासी कवि अविनाश राय भट्ट रचित 'तुलसीप्रकाश' रचना काल स०१६७७ वि० मे सूकर खेत की स्थिति बतायी गयी है । सूकरखेत पुनीत अछय सुखकारी है। सोहत सुरसरि जहाँ भक्त भय हारी है।

"सौरम दूजो नाम षेत को ख्यात है।"

इसी क्रम में तुलती का बश परिचय दिया गया है–

सुकुल आत्मा राम धनी तुम जग कियो प्रकाश

तब घर नरवर मौलि मन प्रगटे तुलसीदास।। ३८।।

इसी के साथ गुरु नरसिंह चौधरी, अनुज नंददास-पत्नी रत्नावली आदि के विवरण हैं और राजापुर बसाने का उल्लेख भी। तात्पर्य यह कि सोरों के पक्ष वाले सारे तर्क इसमें एकत्र कर दिये गये हैं, जिससे यह कृति पूर्णतः संदिग्ध लगती है।

१४ रत्नावली लघु दोहासंग्रह ।। १८७४।।इन दोहों को रत्नावली रचित कहा गया है। इसमें अनेक विद्वानों को संदेह है। इन रचनाओ से जन्म भूमि विवाद का समाधान मिल पाना सभव नहीं है। सोरों मे नरसिंह चौधरी की पाठशाला रत्नावली का घर, तुलसी चौरा की मिट्टी आदि की उपलब्धता बतायी जाती है। किन्तु इनसे जन्म भूमित्व की समस्या हल नही हो सकती।

शोधपरक प्रमुख ग्रन्थ

१. तुलसी की जीवन भूमि ´

लेखक : आचार्य चन्द्रवली पाण्डे

इसका लेखन प्रकाशन १९५४ में हुआ था। ज्ञातव्य है कि जन्मभूमि का दावा करने वाली यह पहली पुस्तक है । इस ग्रन्थ में पाण्डेय जी ने "कवितावली" मे रचित तुलसी के एक छन्द अथवा एक आत्मकथ्य– "तुलसी तिहारो घर जायो हे घर को" के आधार पर यह प्रतिपादित किया है कि गोस्वामी जी का जन्म कही अयोध्या में हुआ था। इस कथन को डॉ० माता प्रसाद गुप्त ने अभिधा के रूप मे न ग्रहण करने का तर्क दिया है। उनका मत है कि भक्तों ने समस्त संसार को राममय माना है, इसलिए "तिहारो घर" मात्र अयोध्या नहीं हो सकता। किन्तु यह दुराग्रह प्रेरित कुतर्क मात्र है। गोस्वामी जी ने लका के विभीषण और किष्किंधा के सुग्रीव की तुलना में अपनी निकटता का दावा किया है। यह कथन अभिधा मे

है। इसका कोई लक्ष्यार्थ— व्यंग्यार्थ नही है। यह आत्मकथ्य, पाण्डेय जी के अनुसार किसी ग्राम विशेष का प्रमाण तो इंगित नहीं करता, किन्तु तुलसीदास प्राचीन अयोध्या राज्य, जिला या उस अंचल में कहीं जन्मे थे, इसका पुष्ट प्रमाण है।

२. गोस्वामी तुलसीदास— (उनकी जन्मभूमि सोरोंसे संबन्धित प्राचीन सामग्री)

लेखक : आचार्य गोविन्द वल्लभ भट्ट शास्त्री

जन्मभूमि की दावेदार यह दूसरी पुस्तक १९५८ में प्रकाशित हुई। शास्त्री जी सोरों सम्बन्धी सामग्री के प्रथम अन्वेषक हैं। उन्होंने बाल्यकाल में ऐसे अनेक दोहे बमभोले मेला यात्रियों से सुने थे, जो रत्नावली, बदरिया ओर तुलसी के पैतृक निवास से सम्बन्धित थे। इन जनश्रुतियों के आधार पर उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि तुलसीदास का घर सोरों के जोगमार्ग में था। वे सुकुल सनाढ्यब्राह्मण थे ओर रत्नावली उनकी पत्नी थी। उनके प्रयास से सं० १९१६ में 'गंगा सभा' की स्थापना सोरो में की गयी। नन्ददास के वंशज पंडित मुरारी लाल से उन्हें "रत्नावली दोहा संग्रह" प्राप्त हुआ। भट्ट जी ने १९२१ की "माधुरी" में "गोस्वामी तुलसीदास का जन्म स्थान सोरों या राजापुर" नामक लेख प्रकाशित कराया। इससे कई विद्वान जैसे रत्नाकर जी, आचार्य पद्मसिंह शर्मा और श्री राम नरेश त्रिपाठी सोरों सामग्री के सर्मथक हो गये। शास्त्री जी ने सोरों सामग्री की प्रदर्शनी कई नगरों मे आयोजित की । इसके बल पर उन्होंने यह सिद्ध किया कि तुलसी के गुरू नरसिंह चौधरी की पाठशाला मोहल्ला चौधरियान में है। वहीं आस—पास उनके परिवार की शाखाएं भी है। इसी बीच शास्त्री जी ने "२५२ वैष्णवन की वार्ता" में संकलित नंददास वार्ता , कवि कृष्ण दास कृत "सूकरखेत माहात्म्य" तथा वर्षफल , पं० मुरलीधर चतुर्वेदी कृत "रत्नावली चरित" कवि प्राणेशकृत 'अष्टाध्यायी' कवि अविनाश राय कृत 'तुलसी प्रकाश'आदि कृतियों का संपादन—प्रकाशन किया और इनके सहारे सोरों को तुलसी की जन्म स्थली घोषित कर दिया। उन्होंने यह तर्क भी दिया कि गोस्वामी जी की कृतिया अवधी में नहीं, बल्कि ब्रजभाषा में लिखी गयी हैं। पुस्तक के आवरण पर इम्पीरियल गजेटियर १८८६ ई०पू० ३८५ का वह अंश मुद्रित है, जिसमें तुलसी को सोरों निवासी लिखा गया है।

इस पुस्तक मे गोस्वामी जी के इस आत्मकथ्य – "जायो कुल मंगनबधावनो बजायो सुनि भयो परिताप पाप जननी जनक को " के सहारे विचित्र

स्थापना की गयी है। स्पष्ट है कि शर्मा जी ने जन्म स्थली प्रसंग के कई अनर्थ किये हैं।

इसमें कई गजेटियरों, इतिहास ग्रन्थों और स्फुट निबन्धो के सन्दर्भ दिये गये हैं। अपनी तर्क शक्ति द्वारा लेखक ने सबका यही निष्कर्ष निकाला है कि सोरों ही असली सूकरखेत है। वही तुलसी की गुरुभूमि और जन्म भूमि है। यहीं के निवासी नन्ददास उनके सगे अनुज थे और बदरिया निवासी दीनबन्धु की पुत्री रत्नावली इनकी पत्नी थी। पैतृक आवास कहीं रामपुर बताया गया है और कही जोग मोहल्ला। शर्मा जी का आग्रह रहा है कि राजापुर (बांदा) ''तुलसी प्रकाश' के कथनानुसार राजा साधु का बसाया हुआ है। इस पुस्तक के अन्त में कृष्णदास कृत वशावली, वर्षफल, तुलसी प्रकाश 'अष्टसखामृत' तथा 'रत्नावली चरित ' से सम्बन्धित अंश उद्धत किये गये हैं। कुलमिलाकर यह कहा जा सकता है कि इस ग्रंथ के साथ ही जन्म स्थली का विवाद कृत्रिम अभिलेखो, प्रक्षेपों कूटतर्कों और कथ्य–कैतवों से घिरने लगा। भट्ट जी ने इसकी सचल प्रदर्शनी दूर–दूर तक आयोजित करके पाठभेद, प्रक्षेप लीला से अनवगत विद्वानों से जनमत संग्रह करके राजापुर (बांदा) के विरुद्ध जो अभियान शुरू किया, वह आगे चलकर क्षेत्रीयता एव साहित्यिक राजनीति का वितण्डा बन गया। उनके नेतृत्व में सोरों के पक्षधरों ने जन्म स्थली विषयक कई छन्द रच डाले, लेकिन कुछ शब्द प्रयोगों के कारण यह भेद प्रकट हो गया कि ये छंद परवर्ती एवं प्रक्षिप्त हैं। इसी कोटि का एक छन्द द्रष्टव्य है –

> ''पितृजन जन्म धाम तुलसी का रामपुर
> सौरम से पूर्व एक ओर कोस माना है।
> जननी श्री हुलसी है पिता बुद्ध आत्माराम –
> सुकुल सनाढ्यवंश पावन बखानाा है।
> तारी ननसार और बदरी ससुरार ग्राम
> राजापुर तपोधाम भाद्रजन जाना है।
> सूकरखेत सोरों है जन्म भूमि तुलसी की
> मुक्ति भूमि काशी धाम सत्य पकटाना है।।''

तब तक राजापुर (गोण्डा) का दावा सामने नही था, इसलिये उसका उल्लेख नहीं किया गया है। शेष स्थानों (राजापुर तथा काशी) को इसमें निरस्त करते हुए तुलसी से सबन्धित समस्त स्थानों को सोरों के साथ जिस प्रकार एक छन्द में ठूँस–ठूँस कर भरा गया है, उससे प्रकट है कि यह किसी तटस्थ कवि द्वारा सहज भाव से रचा गया छद नहीं हो सकता ।

३. तुलसी जन्मभूमि –सूकरखेत (सोरों)

लेखकः पं० भद्रदत्त शर्मा शास्त्री

इसका प्रकाशन कासगंज से सन् १६५८ मे हुआ था। इसके अनुसार सोरम (सोरों) से एक कोर्स पूर्व रामपुर में सुकुल सनाढ्य वंश-के पं० आत्माराम के पुत्र रूप में तुलसी का जन्म हुआ था। उनकी माता हुलसी निकटवर्ती ग्राम "तारी" की निवासी थी। दूसरे पड़ोसी ग्राम बदरिया में उनकी ससुराल थी। राजापुर तुलसी का तपोधाम था। शर्मा जी के इस अन्वेषण से कई विद्वान सहमत दिखे। शर्मा जी ने तुलसी चर्चा" के माध्यम से लगभग दो दशकों तक यह आन्दोलन चलाया और 'सूकरखेत एकमात्र सोरों ही है" इस सम्बन्ध में साठ प्रमाणों का दावा किया। इस कृति में सारा जोर सूकरखेत पर लगाया गया है। उन्हीं दिनो अवधवासी लाला सीताराम, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय ने सरयू घाघरा सगम के (ग्राम पसका) जिला गोण्डा को नाभादास के 'भक्तमाल' के सहारे सूकरखेत लिखना आरम्भ किया था। शर्मा जी का आग्रह है कि पसका कदापि सूकरखेत नहीं है। उन्होनें ५४ ग्रन्थो का सन्दर्भ देते हुए यह सिद्ध किया कि सूकरखेत सोरों ही है। इसके अतिरिक्त अष्टछापी कवि नन्ददास के सम्बन्ध मे उन्होनें यह आग्रह किया कि वे तुलसी के अनुज थे और यहीं के निवासी थे। तुलसी के कुछ आत्मकथ्यों पर यहां भी विचार किया गया है। जैसे, उनकी आत्मोक्ति "यह भरत खण्ड समीप सुरसरि" में सन्दर्भित स्थल को वे काशी न मानकर सोरों सिद्ध करते हैं। इस तर्क के साथ कि काशी में तुलसी की संगति भली नहीं थी। इसी प्रकार के अनेक कुतर्क इस पुस्तक में प्राप्त होतें हैं। इस ओवर डुइग से जन्म स्थल विवाद जटिल ही नहीं, कुटिल रूप धारण कर फैल गया ।

४. तुलसीदास औरा राजापुर

लेखक : श्री गोवर्धन दास त्रिपाठी

प्रकाशक- लक्ष्मी प्रकाशन माला, प्रेमाश्रय, बाँदा

इस पुस्तक का लेखन, प्रकाशन १६७४ में हुआ था। इसकी पृष्ठभूमि मे

तुलसी स्मारक सभा के अध्यक्ष और उत्तर प्रदेश के पूर्व मंत्री प० चतुर्भुज शर्मा के साथ ही तुलसी शोध केन्द्र, प्रमोद वन, चित्रकूट के अध्यक्ष श्री महेन्द्र प्रताप सिह आई०ए०एस० की प्रेरणा रही है। लेखक ने १३ अध्यायों मे राजापुर की भौगोलिक स्थिति, उसकी प्राचीनता और उसके सांस्कृतिक महत्व पर प्रकाश डालते हुए राजापुर के नामकरण पर विचार किया है। लेखक की मान्यता है कि यहॉ वाल्मीकि का तुलसी के रूप मे अवतरण हुआ है। उनका तर्क है कि सम्राट अकबर ने गोस्वामी तुलसीदास के वशज पं० मुरारी लाल को माफीनामा बॉदा जनपद मे स्थित राजापुर के रूप मे दिया था। यह तर्क नितान्त लचर है, क्योंकि तुलसी का कोई वंशज था ही नहीं। दूसरे, दिये गये माफीनामें घटवाट से संबन्धित हैं, पूरे कस्बे से नहीं। और वे तथाकथित तुलसी के शिष्यों के नाम हैं। इनसे जन्म भूमि कदापि सिद्ध नहीं होती है। राजापुर, यमुना अथवा चित्रकूट के माहात्म्य से जन्मभूमि का कोई लेना देना नहीं है। मूर्तिस्मारक, संकट मोचन मन्दिर, तुलसी का हस्त लिखित 'मानस' आदि जन्मभूमि के प्रमाण नहीं हो सकते।

इस पुस्तक का केन्द्र है, पॉचवा परिच्छेद, जिसका प्रतिपाद्य है, 'गोस्वामी तुलसीदास की जन्मभूमि सिद्ध रूप से राजापुर थी। इसमें एक ओर तो 'भारतीय हिन्दी परिषद्' की दिल्ली गोष्ठी का विवरण है, दूसरी ओर सोरों और गोण्डा सामग्री का खण्डन है। लेखक ने बारम्बार श्री अयोध्या प्रसाद पाण्डेय के लेख का हवाला दिया है और उन्हें गोण्डा जनपद का विद्वान घोषित किया है, जबकि पाण्डेय जी बांदा के निवासी हैं। इस अध्याय में कानूनगोए वंशावली में अकबर द्वारा दिये गये माफीनामों तथा बुन्देलखण्ड के राजाओं द्वारा दी गयी सनदों, तुलसी द्वारा स्थापित संकट मोचन मन्दिर, तुलसी द्वारा लिखित मानस अयोध्या काण्ड उ०प्र० सरकार द्वारा निर्मित स्मारक आदि तर्क–तथ्य प्रस्तुत किये गये हैं। साथ ही 'मानस' में प्रयुक्त भाषा के आधार पर यह प्रतिपादित करने का प्रयास किया गया है कि इसकी भाषा बाँदा जिले की ही है, किन्तु अभी इन सारे तर्कों पर पुनर्विचार अपेक्षित है। इसी में एक निष्कर्ष यह भी निकाला गया है कि दिल्ली संगोष्ठियो में सर्व सम्मति से राजापुर को जन्मभूमि मान लिया गया था, जब कि दिल्ली संगोष्ठियों में सोरों के दावे को अस्वीकार किया गया था। और राजापुर पसका (गोण्डा) का दावा तब तक पूरी तरह व्यक्त नहीं हुआ था, अत: प्रकारान्तर से यथा स्थिति की पुष्टि की गयी थी।

पुस्तक के छठे परिच्छेद मे चित्रकूट के निकटस्थ सूकरक्षेत्र को तुलसी की गुरु भूमि सिद्ध किया गया है । इसमें सूकर क्षेत्रों की सूची दी गयी हैं और कामदगिरि परिक्रमा मार्ग मे स्थित नरहरिदास की कुटिया, समाधि, धुनी, तुलसी दास द्वारा लगाया गया पीपल का पेड, वाराह की मूर्ति आदि का विवरण भी है। यह तर्क दिया गया कि यहाँ से ४–५ मील दूर स्थित हरिहरपुर मे तुलसीदास का लालन–पालन हुआ था। लेखक के अनुसार तुलसीदास ने यहीं रामकथा सुनी थी।

"रामचरित मानस" की अवधी भाषा का प्रश्न भी इसमें उठाया गया है। लेखक ने कुछ शब्दों के सहारे यह निर्णय दिया है कि तुलसीदास यहीं पैदा हुए थे।

ग्रंथकार ने राजापुर में प्राप्त विभिन्न ऐतिहासिक प्रमाणों का उल्लेख किया ह जैसे–संकट मोचन, तुलसी मन्दिर , यमुनाघाट, तुलसी स्मारक आदि। ग्रंथ में क्षेत्रीय इतिहास और व्यवसाय पर पर्याप्त विचार किया गया है, जिसका जन्मभूमि विवाद से कोई सम्बन्ध नहीं है।

उपसंहार रूप मे लेखक का यह निष्कर्ष है कि तुलसी नाम के कई व्यक्ति हुए है और असली (मानसकार) तुलसी राजापुर में ही जनमें थे।

५. तुलसी परिशीलन

संपादक : श्री बाबूलाल गर्ग

इस पुस्तक में भक्त नाभादास रचित 'भक्त माल' के इस कथन का "बाल्मीकि तुलसी भयों" का परिविस्तार किया गया है। ग्रंथकार ने अपने संस्कृतज्ञान के सहारे बाल्मीकि और तुलसी का अन्तस्संम्बन्ध स्थापित किया है, किन्तु इसमें प्रत्यक्ष प्रतिपादन जन्मस्थली का नहीं हो सका है, यद्यपि लेखक प्रकट रूप से राजापुर/चित्रकूट के साथ है।

६. राजापुर तुलसी कै गाथा–तुलसी पंचशती पर अगस्त १९९७ में प्रकाशित इस स्मारिका का सपादन किया प्रो० सियाराम शरण शर्मा ने और प्रकाशन किया – तुलसी सेवा समिति राजापुर ने । कुल १५४ पृष्ठों की इस पत्रिका का मूल्य अनेक विज्ञापनो के साथ और प्रचारार्थ मात्र सौ रूपये रखा गया। इसकी २००० प्रतियाँ वितरित की गयी। संकलनकर्ता के अनुसार इसके प्रकाशन में श्री बद्रीनारायण तिवारी ने "अत्यधिक मदद" प्रदान की ।

इस स्मारिका की सामग्री बहुत अस्तव्यस्त है। "काव्य सकलन " स्तम्भ में लेख छपे हैं, प्रतिक्रिया स्तंभ मे कविताएं छपी हैं और अकारण पचासों फोटो छपी

है। जन्म स्थली को लेकर इसमे २ दजन लेख हे, किन्तु सबमे भयंकर आवृत्ति है। वहीं पुराना 'टेप' कि हमारे पास माफीनामें और सनदें है । वही ससुराल, ननिहाल, नरहरिकुटी, सूकरखेत का आलाप और यह कि अमुक–अमुक ने राजापुर को ही ५०० वर्षों से जन्मस्थली माना है। यह नया विवाद तो अर्थलिप्सावश अथवा सस्ती लोकप्रियता के लोभवश उठाया गया एक दुश्चक्र है। मेरे मतानुसार, ऐसी गाली–गलौज भरी अभद्र भाषा तुलसी की जन्मस्थली की तो नहीं हो सकती। अभद्र बचनों द्वारा इन भद्र आचार्यो ने अपनी ही "भद्द" करायी है। इन्होंने लखनऊ की अयोजित गोष्ठी पर विशेष कोप प्रकट किया है। पृष्ठ १४३ पर मेरा एक पत्र छपा है । उसमे मैंने लिखा था कि "अभी मैं राजापुर, सोरो और गोण्डा के बीच भटक रहा हूँ। किसी भी एक पक्ष का पुष्ट प्रमाण नही मिला है। निर्णय भावोच्छ्वासो द्वारा नही, साक्ष्यों द्वारा होना चाहिए। मैनें मानस की शपथ ली है और दी है।"इस पर संपादक ने टिप्पणी दी है कि जब डॉ० दीक्षित स्वयं दिग्भ्रमित हैं तो फिर उनका जन मानस को दिग्भ्रमित करने का क्या औचित्य? इससे लेखक के दिमाग की थाह और बौद्धिक औकात का पता स्वतः लग जाता है। मैं साक्ष्य केन्द्रित पुरातात्त्विक अभिलेखों के आधार पर जन्म स्थली की खोज का प्रयास कर रहा था। क्या इस प्रक्रिया को अपनाना दिग्भ्रमित होना या करना है? क्या जनश्रुति को आँखे बंद करके स्वीकार कर लेना ही सत्यान्वेषण है? मैने संपादक जी से पूछा कि क्या आपके पास कोई प्रमाण है कि मैंने कहीं गोण्डा का समर्थन किया है। उन्होने क्षमा माँगी। क्या इस खोज मे मीडिया की सहभागिता वर्जित है? यदि ऐसा है तो इस स्मारिका में अपने पक्ष में ६ अखबारों के बयान क्यों छापे गये हैं? सब अखबारों को क्यों स्थान नहीं दिया गया? क्या किसी विवादित विषय पर राष्ट्रीय सगोष्ठी आयोजित करना गुनाह है? इस संगोष्ठी का निमंत्रण प्रायः प्रत्येक राजापुर–समर्थक विद्वान को भी भेजा गया था। एक पूरा सत्र राजापुर को दिया गया था। उसमें १० विद्वान बोले भी, किन्तु सामने बैठे लगभग ४०० तुलसी विशेषज्ञों को वे सहमत नहीं कर पाए तो किसका दोष है? ऐसी गोष्ठी में क्या दक्षिणा के बिना सम्मिलित होना गुनाह होता ?

पूरी स्मारिका क्षेत्रीय संकीर्णता, हठवादिता और मठवादिता से ग्रस्त है। कारण, इसमें विद्वानो की अपेक्षा व्यापारियों, कथावाचकों और राजनयिको का हस्तक्षेप अधिक रहा है।

७. तुलसी जन्म भूमि : एक मौलिक चिंतन (१६६७)

लेखक : प्रेम नारायण गुप्त

इसमें लेखक ने सारो को तुलसी का जन्म स्थान सिद्ध करने के लिये अनेक तर्क दिये हैं। एक तर्क है भाषा के आधार पर । गुप्त जी के अनुसार ये प्रयोग सारों वासी होने के साक्षी हैं। दूसरा तर्क लिपि प्रवृत्ति को आधार बनाकर दिया गया है। लेखक के मतानुसार गोस्वामी जी के ये हस्तक्षेप उनके छत्तीस वर्षों तक सोरो में रहने के प्रमाण है। गुप्त जी ने गजेटियरां से भी कई तर्क दिये हैं और भरसक यह साबित किया है कि तुलसी ने चौवालीस वर्ष की अवस्था में गृह त्याग किया था। इस ग्रन्थ में गुप्त जी द्वारा किया गया स्वाध्याय–श्रम तो सराहनीय हे किन्तु उनकी स्थापनाये स्वीकार्य नहीं हैं, क्योंकि वे जन्म भूमि प्रमाण से प्रत्यक्षत जुडी हुई नहीं हैं। भाषा लिपि के आधार पर कर्मभूमि का सकेत प्राप्त किया जा सकता है, जन्म भूमि का नही। यह द्रविड़ प्राणायाम, मेरे मतानुसार निरर्थक है।

इस ग्रन्थ के पूर्व गुप्त जी ने, 'सूकरखेत और तुलसीदास' (२०२६) और तुलसी चरितामृत (२०३६)' नामक कृतियां प्रकाशित की थीं। इनमें सोरों के सूकरखेत होने, नंददास के अनुज होने और पत्नी रत्नावली से प्रबोध प्राप्त होने के अनेक तर्क, आधारभूत साक्ष्यों के अनेक उद्धरण, विद्वानो के अभिमत, गजेटियरो के अभिलेख आदि सविस्तार प्रस्तुत किए गए हैं।

८. तुलसी जीवन वृत्त, तर्क और तथ्य

लेखक : प० वेदव्रत शास्त्री

यह कृति १६६५ में तुलसीपीठ द्वारा प्रकाशित की गयी है। इसका व्यापक प्रचार प्रसार करके जो मत सग्रह किया गया है, उसे भी पुस्तकाकार प्रकाशित कर दिया गया है। प्रकट है कि इस पुस्तक का ध्येय वस्तुनिष्ठ अन्वेषण : विश्लेषण नहीं, बल्कि विज्ञापन ही रहा है। संकलित तर्क/तथ्य हैं–

१ सोरों ही एक मात्र सूकरखेत है।

२. तुलसी पत्नी रत्नावली के वंशज यहां विद्यमान हैं।

३ उनके अनुज नंददास के वंशज यहीं रहते हैं।

४. अनेक विद्वानों ने इसकी पुष्टि की है आदि।

ये तर्क निरन्तर खण्डित–मण्डित होते रहे हैं। यदि ये सिद्ध भी हो जाये तो भी इनके आधार पर सोरों को कर्मभूमि कहा जायेगा, जन्मभूमि नही। आवश्यकता है तुलसी के पूर्वजों की अचल सम्पत्ति के दस्तावेजों की, जिनका इस कृति मे अभाव है।

इसी क्रम में आचार्य श्री ने एक 'खुला पत्र ' जारी किया है। उसमे ''भक्ति सुधा'' पत्रिका के 'तुलसी जन्मभूमि विशेषांक' मे ''पुर्विया'' लेखकों के प्रकाशित लेखों का खण्डन करते हुए लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित संगोष्ठी पर

क्षोभ व्यक्त किया गया है। शास्त्री जी ने सूकरखेत का शास्त्रीय आधार निरूपित किया है और 'तिमुहानी' का अर्थ बताया है। उन्होने "मूल गोसाई चरित" का अप्रामणिक कहते हुए डॉ० श्यामसुन्दरदास, डॉ० बडथ्वाल आदि को पसका षडयन्त्र से लिप्त सिद्ध कियाहै। इसमें नेपाली रामायण पर भी सन्देह व्यक्त किया गया है। लेखक ने भाषा के आधार पर तुलसी के सोरों में पैदा होने के कई तर्क दिये है। कुल मिलाकर स्पष्ट है कि ये तर्क सोरों पक्ष के पूर्व प्रकाशित ग्रन्थों की सपुष्टि हेतु दिये गये हैं। अन्तर यह है की शास्त्री जी ने संक्षेप में खुला पत्र तैयार करके इस खोज को "अखबारीपन "मे परिणत कर दिया है। पूरा पत्र कुठाजन्य ओर दम्भप्रेरित अपशब्दों से भरा हुआ है। साहित्यिक शोध मे ऐसी अनर्गल सामग्री और तल्खी अशोभन मानी जाती है। निःसन्देह शास्त्री जी ने सराहनीय स्वाध्याय–श्रम किया है, किन्तु वे क्षेत्रीय मोह ओर ज्ञान–मद से मुक्त नहीं हो पाये है। स्पष्ट है कि वे गोस्वामी जी की "रहनि" को चरितार्थ नही कर पाए हैं।

इस ग्रन्थ के पूर्व शास्त्री जी ने 'तुलसी प्रकाश' (स०२०२१) गोस्वामी तुलसीदास (२०३०) और 'तुलसीवृत्त' नामक ग्रंथ प्रकाशित किए हैं। इन सबका निचोड तुलसी जीवन वृत्त : तर्क और तथ्य (२०४२) मे समाविष्ट है।

इन कृतियों के अतिरिक्त तुलसी के जिन विशेषज्ञो और शोधको ने जन्मभूमि के सन्दर्भ मे विस्तृत विचार किया है, उनका भी संक्षेप मे आकलन अपेक्षित होगा।

९. तुलसी, जीवन और विचारधारा

डॉ० राजाराम रस्तोगी द्वारा लिखित इस शोध प्रबन्ध का पुस्तकाकार प्रकाशन काफी चर्चित हुआ है। इसमें रत्नावली, नन्ददास और सोरों सम्बन्धी वे ही तर्क सकलित किए गये हैं, जिनपर सोरों पक्ष के सन्दर्भ में विचार किया जा चुका है।

१०. गोस्वामी तुलसीदास की धर्मपत्नी रत्नावली

११. महाकवि नन्ददास

१२. तुलसीदास का घर द्वार

१३. तुलसी चर्चा

१४. तुलसीदास और उनके काव्य

इन सभी कृतियों के लेखक है– डॉ० रामदत्त भारद्वाज। इन्होंनें सोरो के निकट गंगा तट पर स्थित रामपुर को तुलसीदास की जन्मस्थली सिद्ध किया है। किन्तु अभी तक इन तर्कों की अकाट्यता सिद्ध नहीं हो पायी है। डॉ० भारद्वाज की मूल स्थापनाएं हैं

१– रत्नावली तुलसी की पत्नी थी।

२– नन्ददास उनके अनुज थे।

१५. गोस्वामी जी की जन्मस्थली

लेखक : डॉ गोवर्धन नाथ शुक्ल

दिल्ली सगोष्ठी से प्रेरित इस लघु पुस्तिका में उसी क्षेत्र के निवासी डॉ० शुक्ल ने दावा किया है कि सोरों के पास कोई 'रामपुर' नामक गाँव है ही नही।

१६. तुलसी चरित्र पर शोध

लेखक : पारस नाथ भटट

इसका प्रकाशन १९९७ में हुआ है। इसमें दो तुलसीदास हैं।१. आत्मा राम दुबे के आत्मज २. अनप शर्मा के आत्मज। प्रथम तुलसी राजापुर (गोण्डा) में पैदा हुए थे। वे नरहर्यानद के शिष्य थे। इनका मूल नाम था– तुला राम। द्वितीय तुलसी स० १५९६ मे कविराज का पुरवा (गोण्डा) में पैदा हुए थे। इनके बचपन का नाम था रामबोला। ये नरहरिदास के शिष्य थे। बाबा नरहरिदास (महापात्र) मूलत अकबरी दरबार के कवि थे और असनी (फतेहपुर) के निवासी थे। संन्यासी होकर इन्होनें सोरो, कुरुक्षेत्र तथा सूकरखेत में अपने आश्रम बनाए थे। सात वर्ष की अवस्था में बालक रामबोला इन्हें सूकरखेत के पौष मेले मे मिला था। उसको अपने आश्रम में रखकर इन्होनें रामकथा सुनायी थी। उच्चतर अध्ययन के लिये उसे अपने गुरु शेष सनातन या अनन्तानंद (काशी) की सेवा में भेजकर स्वयं सोरो मे बस गए थे। कालान्तर मे अयोध्या के कवि अनीराम की बहिन बुद्धिमती से तुलसी का विवाह हुआ। पश्चात् उन्होंने वैराग्य ले लिया। इन्होंने राजापुर में कुछ दिनो रहकर राजापुर साधु के नाम पर राजापुर (बाँदा) बसाया। भट्ट जी के अनुसार तुलसी का पालन हरिपुर (हरीगवा, गोण्डा) में चुनिया दासी ने किया था। ७ वर्ष बाद उसकी मृत्यु हो जाने के बाद उनकी ननिहाल (भट्टपुरवा, गोण्डा) के पटटीदारों ने उन्हे सूकरखेत आश्रम में डाल दिया था। मानसकार तुलसी को लेखक ने भट्टवंश में उत्पन्न माना है। लेखक के अनुसार इनका निधन स. १६८० मे हुआ, अर्थात् इन्हे ८४ वर्ष की आयु मिली।

इस कृति में बहुत सारे नये तथ्य हैं, किन्तु ये निष्कर्ष लेखक की भेटवार्ता पर आधारित हैं। इनकी पुष्टि प्रमाणाश्रित नहीं है।

१७. गोस्वामी तुलसीदास, जीवन वृत्त और व्यक्तित्व

इसके लेखक श्री कुलदीप नारायण ''झड़प'' ने अनेक तर्कों तथा तथ्यो के आधार पर यह सिद्ध करने को प्रयास किया है कि तुलसी का जन्म स्थान राजापुर बलिया जिले में है और यह भी कि वहा के भूमिहार परिवार में तुलसी का जन्म हुआ था, किन्तु ये तर्क दुराग्रह प्रेरित अस्तः, अमान्य हैं।

स्फुट साक्ष्य

१ – काशी की सामग्री

१. काशी में एक पुरानी इमारत है, जिसमें हनुमान जी की एक मूर्ति है। कुछ अन्य छोटी–छोटी मूर्तियां है। एक जोड़ी खड़ाऊं है। एक चित्र है और नाव की लकडी का एक टुकडा है।

२. गोपाल मन्दिर के निकट के खडहर में "विनय पत्रिका" के कुछ पदों की रचना की गयी है, ऐसी जनश्रुति है।

३. प्रहलाद घाट पर जहागीर द्वारा १६५५ वि० में बनवाया गया एक चित्र द्रष्टव्य है। कुछ कलाविदों ने इसे परवर्ती कहा है।

४. यहां "रामाज्ञा प्रश्न" की एक प्रतिलिपि है, जिसका रचनाकाल १६५५ वि० उल्लिखित है।

५. यहां गोस्वामी जी के उत्तराधिकारियों को प्राप्त कुछ सनद, दानपत्र आदि रखे हुए हैं।

६. काशी में बाल्मीकि रामायण के उत्तर कांड की एक हस्तलिखित प्रति प्राप्त हुई है, जिसके अंत में लिखा है – संवत् १६४१ मार्ग सुदी लि० तुलसीदासेंन।

७. रामनगर, काशी में तुलसी द्वारा हस्ताक्षरित एक पंचनामा सुरक्षित है, जो गोस्वामी जी के समकालीन टोड़र चोधरी के घरेलू बँटवारे से सम्बन्धित है।

२ – अयोध्या की सामग्री

१ यहां तुलसी चौरा नामक स्थान पर "रामचरितमानस" की एक प्रति रखी हुई है।

२. मोहन सांई के गीत के अनुसार कहा जाता है कि रामनौमी, बैसाख १६३१ वि० को गोस्वामी जी ने मानस का प्रणयन आरम्भ किया था और मार्गशीर्ष ५ स. १६३३ को रामविवाह के अवसर पर यहीं उसे समाप्त किया था।

३ मानस की एक प्रति श्रावण कुंज मन्दिर, अयोध्या में रखी हुई है। प्रसिद्धि है कि 'मानस' के बालकाण्ड की रचना यही हुई थी। कहा जाता है कि इस प्रति में लगे हुए संशोधन स्वयं गोस्वामी जी के द्वारा किये गये थे। कुछ सामग्री रामकथा संग्रहालय और अयोध्या शोध सस्थान (तुलसी स्मारक भवन) में रखी हुई है।

३ – राजापुर (बाँदा सामग्री)

लगभग सौ वर्ष पूर्व तक यमुना के किनारे स्थित एक कच्चे मकान को तुलसी गृह" कहा जाता था। अनन्तर उससे कुछ हटकर एक पक्का मकान बनवाया गया और फिर "तुलसी स्मारक" तैयार कराया गया। वहाँ द्रष्टव्य है–काले पत्थर की तुलसी प्रतिमा और "मानस का खण्डित हस्तलेख तथा तुलसी के उत्तराधिकारियो के नाम कुछ सनदें। किन्तु इनमें कोई सामग्री तुलसी के जन्म स्थान का प्रमाण नहीं दे पा रहीं है। कानून गोय कायस्थ वंशावली का जो साक्ष्य इधर विद्वानों ने प्रस्तुत किया है, उसमें किसी समकालीन तुलसी का उल्लेख मात्र है जो जन्म भूमि प्रदरण में अपर्याप्त है।

(४) – सोरों सामग्री

यहाँ जन्म स्थान विषयक कई साक्ष्य द्रष्टब्य हैं–

१ – रामचरित मानस, बालकाण्ड का हस्तलेख १६४३ वि० लेखक नंददास पुत्र कृष्ण दास हेतु लिखी रघुनाथ दास काशीपुरी में। इसमें कई लिखावटें है। अत. कृति संदिग्ध है। यों हस्तलेख का सीधा संबन्ध जन्म भूमि से नहीं जुड़ पाता।

२ – रामचरितमानस "अरण्यकाण्ड सं०१६४३ वि०। इस पाण्डुलिपि की पुष्पिका में अंकित है–

" इति श्री रामायने सकल कलि कलुष विध्वंसने विमल बैराग्य सम्पादिनी षट सुजन संवाद। रामवन–चरित्र वर्ननी नाम तृतीय सोपान अरण्यकाण्ड समाप्त। श्री तुलसीदास गुरु की आग्या से उन के भ्राता–सुत कृष्णदास सोरों क्षेत्र निवासी हेतु लिखित लछिमनदास कासीजी मध्ये सं० १६४३ आषाढ़ सुदी ४ सुकेइति" (पृष्ठ १६)

इसका मुख्य बिन्दु है, प्रचलन के अनुरूप नंददास को तुलसी का अनुज घोषित करना, जो अभी विवाद संकुल एवं विचारणीय है।

३ – रामचरितमानस (लीथो)हिन्दू प्रेस

इसमें सूकर खेत का अर्थ दिया गया है– गंगा तीर सोरों घाट जहाँ बराह अवतार भयो।" , किन्तु वह कृति परवर्ती है।

५–राजापुर (गोण्ड़ा) की सामग्री

यहां के पक्ष धरों ने एक ' नेपाली रामायण" का अनेकत्र उल्लेख किया है। इस खोजने का श्रेय अवध नारायण सिंह को दिया जाता है, किन्तु इसमें 'पुष्पि का' नही है और तुलसी के आगे 'श्री मती' लिखा हुआ है, जिससे यह संदिग्ध

लगती है। नरहरि आश्रम में 'मानस' का जो हस्तलेख रखा हुआ है और नरहरि तथा तुलसी की जो प्रतिमायें रखी हुई हैं, वे बहुत परवर्ती हैं। यह अवश्य सुनने को मिलता है कि काफी कुछ प्रामाणिक सामग्री की तस्करी हो गयी है। आत्माराम का "टेपरा" भी विवादास्पद है। तात्पर्य यह है कि इस सामग्री द्वारा भी जन्म भूमि का पुष्ट प्रमाण प्राप्य नही है।

६—चित्रकूट सामग्री

कामदगिरि परिक्रमा मार्ग में इधर गुरु नरहरि की कुटी, बाराह की मूर्ति, सूकर खेत, नरहरि एवं तुलसी की छतरियां तथा मूर्तियां प्रस्तुत की गयी है" , जो पूर्णतः प्रायोजित हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्राचीन जीवनी ग्रन्थों में इतने प्रक्षेप भर दिये गये हैं और राजापुर,(बाँदा) सोरों, राजापुर (गोण्डा) में सुरक्षित सामग्री इतनी संदिग्ध है कि इनके सहारे तुलसी की जन्म भूमि का कोई निर्णय ले पाना न संभव है,न समीचीन। तीनों स्थानों की सामग्री 'ट्रिप्लीकेट' है, अर्थात् ३ मूर्तियां, ३ स्मारक , ३ नदी, ३ जन्म भवन, ३ नरहरि, ३ सूकरखेत, ३ वटवृक्ष, ३ हनुमतमूर्ति, ३ रामायण—हस्तलेख ३ससुरालें, ३ ननिहालें, ३ आस्पद आदि। अर्थात् तीन समानान्तर व्यवस्थाएं कर ली गयी हैं। इनमें अयोध्या सामग्री राजापुर (गोण्डा) की पोषक है और चित्रकूट सामग्री राजापुर (बाँदा) की, किन्तु कुल मिलाकर इनमें कोई सामग्री तुलसी जन्मस्थली का अकाट्य साक्ष्य सिद्ध नहीं हो पायी है।

सर्जनात्मक लेखन

रत्नावली तथा तुलसी को चरितनायक बनाकर अनेक कृतियां हिन्दी में लिखी गयी हैं, जैसे–

१ –	रत्नावली (काव्य)	मैथिली शरण गुप्त
२ –	तुलसीदास (खण्ड काव्य)	सूर्यकान्त त्रिपाठी " निराला"
३ –	तुलसी दास (नाटक)	उदय शंकर भट्ट
४ –	तुलसी दास	कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह
५ –	सन्त तुलसी दास	डा० राम कुमार वर्मा
६ –	उत्तरायण (महाकाव्य)	डा० राम कुमार वर्मा
७ –	रत्ना की बात	डा० प्रेम नारायण टण्डन
८ –	मानस का हंस (उपन्यास)	अमृतलाल नागर
९ –	रत्नावली चरित	जय गोपाल मिश्र
१० –	सोरों का संत	रामकृष्ण शर्मा आदि।

इन कृतियों में संक्षेप में राजापुर (बाँदा) को प्रचलन के आधार पर तुलसी की जन्म भूमि लिख दिया गया है। रत्नावली की जन्म भूमि प्रायः सोरों लिखी गयी है। स्पष्ट है कि सर्जनात्मक लेखन लोकमान्यता अथवा उद्‌भावना के सहारे चलता है, इसलिये जन्म स्थली के प्रश्न पर इनका आश्रय लेना समीचीन न होगा। पिछले दशकों में राजापुर (बाँदा) सोरों, राजापुर (गोण्डा) का दुराग्रह लेकर कई कृतियां सोद्‌देश्य प्रकाशित की गयी हैं, " जो प्रत्यक्षतः क्षेत्रीय विवाद से प्रेरित है," अतः वे सतर्कता पूर्वक अवहेलनीय हैं।

स्फुट लेखन

उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त विगत १०० वर्षों में तुलसी जन्मस्थली पर स्फुट रूप से बहुत लिखा गया है! हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों मे गार्सादंतॉसी ने राजापुर (बांदा) का उल्लेख किया ! शिव सिहं सेंगर ने पहले पसका की पुष्टि की, फिर इलाहाबाद के राजापुर की! डा० ग्रियर्सन ने दुवाबा के तारी को जन्मभूमि बताया, विल्सन ने हाजीपुर का नाम लिया, डा०तास्सीतोरी कारपेन्टर, एफ.ई.की, एडिवन ग्रीब्ज मैगडूगल, जे.एम. मैक्सी आदि राजापुर का नाम रटते रहे! एफ.एस, ग्राउस ने हस्तिनापुर की खोज की ! इसी क्रम मे लालासीताराम ने अपने द्वारा संपादित 'मानस--अयोध्या काण्ड' की भूमिका में सोरो की घोषणा की ! पं० रामनरेश त्रिपाठी ने 'तुलसीदास और उनकी कविता' में लिखा कि सोरों ही सूकर खेत है (प १६२) डॉ०श्याम सुन्दर दास, तथा डा०पीतांबर दत्त बडथ्वाल ने यह माना कि सूकर खेत अयोध्या के निकट है, किन्तु जन्म भूमि के प्रश्न को अधिक गंभीरता से न लेते हुए उन्होंने राजापुर का भी समर्थन कर दिया। इसी प्रकार एल्विन अयोध्या तथा राजापुर के बीच द्विविधाग्रस्त रहे। मिश्रबंधुओ ने इलाहाबाद वाले राजापुर का समर्थन किया। डा० धीरेन्द्र वर्मा ने दबी आवाज मे लिखा कि 'जन्मस्थान कदाचित सोरों है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसे और रहस्यपूर्ण बना दिया। वे लिखते हैं कि 'सोरों सामग्री महत्वपूर्ण न होते हुए भी वजनदार है' (हिन्दी साहित्य पृ.२३८)

इसी प्रकार की द्विविधा डा० दीन दयाल गुप्त ने दिखाई। हिन्दुस्तानी एकादमी पत्रिका में प्रकशित लेख 'तुलसीदास नन्ददासके जीवन पर नया प्रकाश' मे उन्होने सोरों सामग्री की प्रामाणिकता की पुष्टि की, किन्तु कालान्तर में लिखा कि' विश्वास अभी तक नहीं जमा कि तुलसीदास नन्ददास चचेरे भाई थे और वे सोरों के निवासी थे। इस बीच सबसे गंभीर खोज डा० माता प्रसाद गुप्त ने की। उन्होंने स्पष्ट लिखा कि राजापुर (बांदा) में तुलसी का कोई जन्म स्थान था, इसका प्रमाण नहीं मिलता। उन्होंने सोरों क्षेत्र, मुख्यतः तुलसी की तथाकथित ससुराल बदरिया का सर्वेक्षण करके सिद्ध किया कि बदरिया गॉव बहुत बाद में बसाया गया है। यह भी कि उस क्षेत्र में रामपुर नाम का कोई गॉव नहीं है और साथ ही मोहल्ला चौधरान में नरसिहं मन्दिर है, न कि नरसिंह चौधरी की पाठशाला (गोस्वामी तुलसी

दास पृ. १०४) इसी प्रकार अपने अपने ग्रन्थों में कुछ स्फुट टिप्पणियां डा० बलदव मिश्र, डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, डा० राम बहोरी शुक्ल, डा० राम कुमार वर्मा आदि ने राजापुर बादां के पक्ष में दीं। श्री हरिशंकर शर्मा, श्रीअम्बा प्रसाद सुमन श्री गौरीशंकर द्विवेदी (बुन्देली वैभव) श्री नारायण चतुर्वेदी, डा० हरवंश लाल शर्मा डा०शंभुनाथ सिंह, पदमसिंह शर्मा आदि ने यंत्र तंत्र सोरों का समर्थन किया।

दूसरी ओर डा०विद्यानिवास मिश्र, डा० चन्द्र प्रकाश सिंह,डा० जगदीश गुप्त, डा० राममूर्ति त्रिपाठी, डा० भगवती प्रसाद सिंह,श्री लल्लन प्रसाद ब्यास, डा० हरिकृष्ण अवस्थी आदि ने पसका 'गोण्डा' के पक्ष में 'अपने स्फुट लेखो में ' विचार किया। डा० भगवदाचार्य ने 'भक्ति सुधा' नामक पत्रिका के कई विशेषाक प्रकाशित करके राजापुर (गोण्डा) के पक्ष को कई बार रेखांकित किया है।

निष्कर्ष यह है कि जन्म स्थली का विवाद पहले प्राचीन जीवनी ग्रन्थो के स्तर पर चला, फिर गजेटियर के स्तर पर। उसके बाद द्वंद्व छिडा'मानस' की टीकाओं में तथा उनमें लिखी गयी भूमिकाओ से। फिर हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखक इससे टकराये। समय–समय पर अनेक सर्जक साहित्यकारों ने इस प्रश्नको सुलझाने–उलझाने का प्रयास किया। इसमे विश्वविद्यालयों के शोधको शिक्षकों ने भरसक भागीदारी निभाई और अनेक संस्थाओं ने इस दिशा में संघबद्ध प्रयास किया। राजापुर की पहल पर एक बार उ०प्र० शासन ने डा० सम्पूर्णानन्द की सहमति से उसी क्षेत्र के प्रभावी मंत्री पं० चतुर्भुज शर्मा की देखरेख में एक तथा कथित कमेटी बनायी। अर्थात् उसे गंभीरता पूर्वक नहीं लिया गया। अब यह प्रश्न पत्रकारों के बीच में है, इसलिये कुछ ज्यादा ही गंभीर और संवेदनशील हो गया है। शायद प्रस्तावित अनुदान भी एक कारण है। आवश्यकता यह है कि राजापुर 'बादा' सोरों,राजापुर (पसका गोण्डा) तीनों स्थानों पर तुलसी स्मारक बनें, क्योकि इनमें कोई कर्मभूमि है; कोई गुरु भूमि। जन्मभूमि वाला गांव अभी सुनिश्चित नही है। गांव की सही खोज तभी संभव होगी, जब यह शोध पुरातत्त्व विभाग को सौप दिया जायेगा।

गजेटियरों के साक्ष्य

राजापुर (बॉदा) सोरों और गोण्ड़ा विषयक गजेटियर भी इस सन्दर्भ मे अवलोकनीय हैं। इसके संबन्ध मे प्राप्त प्रथम साक्ष्य है–

राजापुर (बाँदा)

"Rajapur is the name of the town and Majhgawan that of Mauza or village area,with in which it is situated. According to tradition the town was founded by Tulsidas, celebrated author of Ramayan"

ImperialGazetteer of India, Volume II (provincial series) calcutta 1908,statical description and Historical accounts of the North Westem Province of India, Ed.Edwin T.A. Tikinson,Vol.I Bundelkhand, Allahabad 1874

अर्थात अकबर के शासन काल में एक पवित्र व्यक्ति, जिसका नाम तुलसीदास था, इस जंगल में यमुना नदी के किनारे आया, जहाँ राजापुर स्थित है। यही कथन इलाहाबाद से प्रकाशित स्टेटिटिकल डिस्क्रप्शन एण्ड हिस्टारिकल एकाउण्ट्स ऑफ नार्थ वेस्ट प्राविन्सेज ऑफ इण्डिया खण्ड –। बुन्देलखण्डमे भी दोहराया गया है।

इम्पीरियल गजट खण्ड –।। द्वितीय संस्करण १८८६ पृ ३८५ में अंकित है कि राजापुर की स्थापना अकबर के शासन काल में सोरों से आये एक भक्त तुलसीदास द्वारा हुई थी, जिसने एक मन्दिर बनवाया था और अनेक अनुयायियो को आकर्षित किया था। इस कथन से एक विशेष प्रकार का विवाद आरम्भ हो गया। परवर्ती गजेटियरों में सोरो का नाम डाल करके गजेटियर लेखक ने इस कथन को सन्दिग्ध बना दिया है। राजापुर के समर्थकों का सन्देह है कि यह कार्य लाला सीता राम जी का है। इन कथनों के आधार पर कई विद्वानों ने राजापुर को तुलसी की जन्म भूमि न मानकरके कर्म भूमि घोषित किया है। अंग्रेजों द्वारा तैयार किये गये गजेटियर जनश्रुतियों पर आधारित हैं। ये जनश्रुतियां निराधार है। विदेशी और विभाषी होने के नाते यह भी संभव है कि उन्हें बहुत प्रामाणिक सामग्री न मिल पाई हो। इन गजेटियरों के साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि राजापुर (बॉदा) तुलसी की कर्म भूमि तो थी, पर जन्मभूमि नहीं।

सोरों (एटा)

इससे संबन्धित चार उल्लेख प्राप्त होते हैं–

(1)

Traddition has it that in Akbar's reign a holy man named Tulsidas, a resident of Soron, in paragnah Aliganj of the Etah district, came to the jungle on the Jamuna where Rajapur now stands, erected a temple, and devoted himself to prayer and meditation. There are some curious local customs peculiar to Rajapur devired from the precepts of Tulsi"

Statistical Desctiptive and Historical Account of the North Western province of India. Ed. by Edwin T. Atkinson. Vol. I Bundelkhand Allahabad, 1974 A, D, PP. 572-57

(2)

"Rajapur was founded in the reign of Akbar by Tulsidas, a devotee from Soron, who erected a temple and attraeted many followers"

Imperial Gazetteer of India, Vol, XI Ed. by W. W. Hunter 2nd edition 1886, pp. 385-386.

(3)

"Rajapur is the name of the town, and majhgaon that of the mauja or village area with in which it is situated. According to tradition, the town was founded by Tulsidas, the celebrated author of the Ramayan and his residence is stil'L shown."

Imperial Gazetter of India 1908 Calcutta U.P.II (Provincial Series) Page 50

(4)

"It is said that in the reigh of Akbar a holy man, named Tulsidas, a resident of soron in Kasganj Tahsil of Etah district, came to the Jungle on the bank of Jamuna, where Rajapur now stands, and devoted himself to prayer and mediation. Tulsidas, is the author of the Ramayana, and his house is still shown in the town. Local tradition says that Tulsi Das became acquainted with Rajapur through his having married into a Brahman family in Mahowa, tahasil Sirathu district Allahabad."- District Gazetteers of the United provinces vol. XXI 1900. PP. 285-286.

स्टेटिटिकल डिस्क्रिप्शन ऐण्ड हिस्टोरिकल एकांउट्स ऑव द नार्थ

वेस्टर्न प्राविंसेज ऑव इण्डिया प्रथम जिल्द बुन्देलखण्ड, सम्पादित एडविन टी० एटकिंसन द्वारा सन् १८७४ ई० में प्रयाग से प्रकाशित हुआ था। इस शासकीय विवरण (गजेटियर) के पृष्ठ ४७२–४७३ पर यह लिखा हुआ है कि ऐसी जनश्रुति है कि अकबर के शासन काल में एक पवित्र आत्मा, जो एटा जनपद के अलीगज परगने में सोरों नामक स्थान का निवासी था, यमुना के किनारे उस जंगल में आया, जहॉ आज राजापुर बसा है। उसने एक मन्दिर बनवाया और वहीं प्रार्थना करते हुए दत्त–चित्त होकर रहने लगा। उसकी साधुता ने शीघ्र ही अनुयायियों को आकृष्ट किया और वे उसके चारों ओर बस गये। जैसे–जैसे उनकी संख्या बढती गयी, उन्होंने आश्चर्यजनक सफलता से अपने को व्यापार तथा धर्म में लगाया। यहॉ कुछ विचित्र स्थानीय परम्परायें हैं, जिनका सम्बन्ध तुलसीदास जी से है।

द्वितीय शासकीय विवरण (गजेटियर) "इम्पीरियल गजेटियर ऑव इण्डिया" जिल्द–११, डब्लू–डब्लू हंटर द्वारा अनूदित हवनर एण्ड कम्पनी लन्दन से १६८६ ई० मे प्रकाशित द्वितीय संस्करण के पृष्ठ ३८५–३८६ के पूर्व वही तथ्य इस प्रकार स्पष्ट किया गया है कि 'सोरों' के सन्त तुलसीदास द्वारा राजापुर बसाया गया। तुलसीदास ने वहां एक मन्दिर का निर्माण कराया तथा अनेक अनुयायियों को आकर्षित किया।

इम्पीरियल गजेटियर ऑव इण्डिया, यू०पी० सेकेण्ड प्राविन्शियल सीरीज (यूनाईटेड प्राविन्सेज़ ऑव आगरा एण्ड अवध, सन् १६०८ में कलकत्ता से प्रकाशित गजेटियर के पृष्ठ ५० पर लिखा है कि राजापुर कस्बे का नाम है और मझगाव उस मौजे अथवा उस मण्डल का नाम जिसके समीप यह स्थित है। जनश्रुति के अनुसार यह कस्बा रामायण के प्रसिद्ध रचयिता श्री तुलसीदास जी के द्वारा बसाया गया था जिनका निवास अभी तक दिखाया जाता है।

चतुर्थ शासकीय विवरण (गजेटियर) "बाँदा गजेटियर" इक्कीसवी जिल्द डी एल. ड्रेके ब्राक मेन आई.सी.एस द्वारा सन् १६०६ ई० में सम्पादित तथा गवर्नमेंन्ट प्रेस इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ था। इसमें "पृष्ठ संख्या २८६–८६ पर मुद्रित है"– जनश्रुति है कि अकबर के राज्यकाल में तुलसीदास नाम के एक पवित्रात्मा, जो एटा जिले की तहसील कासगंज में सोरो के निवासी थे, यमुना जी के किनारे उस जंगल में आए, जहाँ अब राजापुर विद्यमान है और वे पूजा–ध्यान मे प्रवृत्त हो गये। शीघ्र ही उनके पावित्र्य से आकृष्ट होकर उनके अनुयायी चारो

ओर बस गये, और जब उनकी सख्या में वृद्धि हुई तो वे वाणिज्य और धर्म मे दत्तचित्त हो गये। वस्तुतः ये वे ही तुलसीदास हैं, जिन्होंने रामायण की रचना की है। कस्बे में उनका घर अब भी दिखाया जाता है । उसकी इमारत कच्ची ओर नीची थी, किन्तु अभी हाल में उसका पुनर्निमाण हो गया है और उसमें एक मन्दिर तथा रामायण की एक प्राचीन किन्तु किंचित् खण्डित पाण्डुलिपि विद्यमान है। मन्दिर से लगी हुई एक छोटी मुआफी है , किन्तु वर्तमान मुआफीदार अपठित और झगड़ालू हैं और आदरणीय कवि ने जिन पवित्र और उच्च आदर्शों का प्रवचन किया था, उनकी भावना के लिये कुछ नहीं करते । मन्दिर में पत्थर की एक प्रतिमा है जिसे तुलसी की प्रतिमा बताया जाता है। यह भी कहा जाता है कि यह राजापुर के निकट बालू में दबी हुई मिली थी। स्थानीय जनश्रुति है कि तुलसीदास राजापुर से घनिष्ट हो गये थे। क्योंकि उन्होंने इलाहाबाद जिले की तहसील सिराथू मे महेवा के एक ब्राह्मण कुल में अपना विवाह कर लिया था। राजापुर में कुछ विचित्र प्रथाओं का प्रचार है, जिनका उद्गम तुलसीदास जी के उपदेशों से है। वहॉ चूने–पत्थर के घर बनाने की आज्ञा नहीं है और धनी से धनी भी कच्चे घरों में रहते है। केवल मन्दिर ही पक्के बन सकते हैं। नगर के भीतर नापितों (नाईजाति) को बसने की आज्ञा नहीं है और बेरिया जाति (बेड़िन) के अतिरिक्त किसी और जाति की नर्तकियाँ वहाँ निवास नहीं कर सकती हैं। कुम्हारों पर भी निवास का प्रतिबन्ध है। घट भाण्ड बाहर से मंगाए जाते हैं। किन्तु ये नियम अब शिथिल हो गये हैं। मात्र तुलसी के घर (आस पड़ोस) तक लागू है।

इन गजेटियरों में कई प्रामाणिक विवरण है, किन्तु वाक्य सरचना पर विचार करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि 'जो सोरो' का निवासी था' यह उपवाक्य बीच मे एक निहित उद्देश्य से डाल दिया गया है। इन कथनों से इतना ही अर्थग्राह्य है कि तुलसीदास ने राजापुर की स्थापना की थी और वे बाहर से यहॉ चल कर आये थे। इस प्रकार सोरों को तुलसी की जन्मस्थली घोषित करना प्रमाण पुष्ट नहीं होगा।

गोण्डा (अवध) गजेटियर

इस सम्बन्ध में मात्र दो गजेटियर प्राप्त हुए हैं, जो यह जानकारी देते है कि पसका निवासी बेनीमाधव दास ने 'गोसाईं चरित' नामक जीवनी लिखी थी नकि 'मूल गोसाईं चरित' गजेटियर ऑव अवध भाग–३ पृ० ५०८ (१८७८) मे

उल्लेख है कि देवी पाटन के निकट तुलसीपुर गोण्डा की स्थापना ३०० वर्ष पूर्व तुलसीदास कुर्मी द्वारा की गयी थी। सिद्ध है कि इस क्षेत्र में तुलसीदास नामधारी बहुत हुए हैं। गोण्डा गजेटियर में बेनीमाधव को तुलसी का सखा शिष्य कहा गया है। तात्पर्य यह है कि तुलसी पसका से सम्बन्धित रहे हैं।

One or Two Gonda Worthein have attained some major of literary fame. Beni Madho Das of Paska was a deciple and companion of Tulsidas. whose life he wrote in the form of poem as, entitled, "The Govswami Charitra"

W.C. Banatt.
The District Gazatteer of
Gonda Vol XI.

उपर्युक्त गजेटियरों का निष्कर्ष है कि तुलसीदास ने राजापुर की स्थापना की थी। अर्थात् राजापुर उनकी जन्मभूमि नहीं है। यह भी उल्लेख हुआ है कि वे सोरों से राजापुर गये थे, किन्तु वे सोरों में जनमें भी थे। यह नहीं लिखा गया है। यों सोरों वाला अंश प्रायोजित प्रतीत होता है। गोण्डा गजेटियर में तुलसी जन्म भूमि का नाम नहीं है। हां, उनके जीवनी लेखक साथी बेनी माधव दास को पसका निवासी बताया गया है और उनकी कृति का नाम दिया गया है गोसांई चरित। इस प्रकार स्पष्ट है कि तीनों स्थानों से जुड़े गजेटियरों से कुछ–कुछ सूत्र अवश्य मिल जाते है यों इनके आधार पर किसी एक स्थान को तुलसी की जन्मभूमि घोषित कर देना न्यायोचित न होगा।?

तुलसी जन्म स्थली विषयक प्रमुख संगोष्ठियां

तुलसी की जन्म स्थली पर विचार करने के लिये अब तक दर्जनों राष्ट्रीय संगोष्ठियां आयोजित की जा चुकी हैं। इसमें विशेष रूप से चर्चित हुयीं हैं–

१. दिल्ली विश्वविद्यालय की 'अनुसंधान परिषद्' की गोष्ठी
२. "भारतीय हिन्दी परिषद्' की दिल्ली संगोष्ठी"
३. तुलसी सेवा समिति, राजापुर की संगोष्ठियां (१९९७)
४. लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित संगोष्ठी (१९९७)
५. मानस संगम, कानपुर की संगोष्ठिया
६. 'सनातन धर्म परिषद्' की संगोष्ठियां
७. श्री गंगा सभा (सोरों) की गोष्ठी
८. अयोध्या शोध संस्थान की गोष्ठी
९. विभिन्न रामायण महोत्सव आदि।

ये संगोष्ठियां मुख्यतः तीन स्थानों से जुडी हुयी हैं–

१. राजापुर (बाँदा)
२. सोरों (एटा)
३. राजापुर (गोण्डा)

आवश्यकता यह है कि दिल्ली तथा लखनऊ विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त अन्य विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभाग इसमें सहभागिता करें। साथ ही प्रमुख हिन्दी संस्थाए (जैसे : नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, हिन्दुस्तानी अकादमी, साहित्य अकादमी आदि) भी इसका दायित्व सम्भालें। तुलसी का सम्बन्ध पूरे हिन्दी जगत से है। उनके जीवन-वृत्त की ओर प्रमाद और पक्षपात बरतना सर्वथा अशोभनीय अपकृत्य है। अब तक इस दिशा में किये गये प्रयासों का निष्कर्ष इस प्रकार रहा। –

दिल्ली गोष्ठी

प्रथमबार हिन्दी अनुसंधान परिषद्, दिल्ली विश्वविद्यालय में २२ फरवरी १९५९ को पण्डित गोविन्द बल्लभ भट्ट की सामग्री पर एक विचार गोष्ठी आयोजित की गयी। इसका जो विवरण साप्ताहिक हिन्दुस्तान, ८ मार्च १९५९ में प्रकाशित हुआ, उसके अनुसार पूरी संगोष्ठी का निष्कर्ष यह रहा कि सोरों सामग्री से सम्बन्धित जितने प्रमाण दिये गये हैं, वे सब सन्दिग्ध है।

'परिषद्' गोष्ठी

'भारतीय हिन्दी परिषद्' के तत्त्वावधान में दिल्ली विश्वविद्यालय में ३१ मई १९६० को डॉ० धीरेन्द्र वर्मा की अध्यक्षता मे एक विचार गोष्ठी हुई। इसका विवरण ६ जून १९६० के साप्ताहिक हिन्दुस्तान मे प्रकाशित हुआ। विभिन्न विचार सत्रो मे आचार्य विनय मोहन शर्मा, आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी, डॉ. नगेन्द्र, पं० वेदव्रत शास्त्री, डॉ राम दत्त भरद्वाज, डॉ. उदयभानु सिंह, डॉ. गोवर्धन लाल शुक्ल, श्री रामनरेश त्रिपाठी, डॉ० माता प्रसाद गुप्त, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र आदि विद्वान सम्मलित हुए। इनमें डॉ. हरवंश लाल शर्मा रामनरेश त्रिपाठी, वेदव्रत शास्त्री और डॉ० राम दत्त भारद्वाज सोरों के समर्थन मे थे, शेष उसके विरोध में। तुलसी साहित्य के शीर्षस्थ विद्वान आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने घोषित किया कि सोरों समर्थक ये गजेटियर जनश्रुतियो पर आधारित हैं, इसलिये मान्य नहीं है। एक ही गजेटियर में सोरो का नाम है और महेवा का भी उल्लेख है, जिसे राजा पुर बांदा के पक्षधर तुलसी की ससुराल मानते है। इस प्रकार इन गोष्ठियों में सोरों विषयक सामग्री को प्रमाणपुष्ट नहीं माना गया। पं० वेद व्रत शास्त्री (सोरों) का मत है कि गोष्ठी अनिर्णित रही, जबकि अधिसंख्य प्रतिभागियों का मत है कि सोंरो पक्ष निरस्त हो गया था।

लखनऊ गोष्ठी

लखनऊ विश्वविघालय के हिन्दी विभाग में ६,७ जनवरी १९९७ को एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया और उसमें राजापुर (बादा) सोरों (एटा) और राजापुर (सूकरखेत,पसका–गोण्डा) से जुड़े समस्त विद्वानो को आहूत किया गया कि वे अपने–अपने साक्ष्यों एवं प्रमाणों का सार्वजनिक प्रदर्शन करें। पुराने दस्तावेज की मूल जॉच करके और बहस सुनकर निर्णय देने का दायित्व उच्चन्यायालय (लखनऊ पीठ) के दो अवकाश प्राप्त न्यायमूर्तियों (जस्टिस सहाय और जस्टिस माथुर) को सौंपा गया। इस गोष्ठी में बॉदा,एटा, गोण्डा तीनों को एक--एक सत्र दिया गया। तीनों के अपने चुने हुए आठ–दस वक्ता मंच पर आये और समय की सीमा में उन्होनें अपने–अपने तर्क रखे। चौथे सत्र (खुले अधिवेशन) मे श्रोताओं की टिप्पणियां सुनी गयीं, परस्पर शास्त्रार्थ हुआ और फिर दोनो न्यायमूर्तियो की व्यवस्था के अनुसार निर्णय को इसलिये सुरक्षित रख लिया गया

कि कुछ विद्वान अपने साथ मूल प्रमाण नहीं ला पाये थे। न्यायमूर्तियों का यह भी विचार था कि यथासमय वे स्थल–निरीक्षण भी करेंगे। किन्तु एतदर्थ साधन सुलभ नही हो पाये। इस गोष्ठी में सोरों पक्ष से पं० देवव्रत शास्त्री के नेतृत्व में अनेक विद्वान लखनऊ आये। राजापुर बादा का नेतृत्व पाण्डेय बन्धु ने किया। राजापुर (गोण्डा) का नेतृत्व डॉ० भगवदाचार्य ने किया। विभिन्न विश्वविद्यालयों महाविद्यालयो के विद्वान शोधार्थी,पत्रकार और तुलसी के प्रबुद्ध पाठक भारी संख्या मे इसमे सम्मिलित हुए। इस गोष्ठी में राजापुर (गोण्डा) का पक्ष प्रबल रहा।

सनातन धर्म परिषद् की गोष्ठियां

विगत २३ अप्रैल ६४ को लखनऊ में एक विचार–गोष्ठी प्रदेश के पूर्व मुख्यमत्री पं० श्रीपति मिश्र की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। मुख्य समागत न्यायमूर्ति श्री तिलहरीने इसमें स्पष्ट उद्घोष किया कि तुलसी अवध अंचल में ही जनमे थे। विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० महेन्द्र सिंह सोढा और हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो० सूर्य प्रसाद दीक्षित ने इस खोज की प्रक्रिया पर विस्तृत प्रकाश डाला। इस गोष्ठी के अनेक वक्ताओं, शिक्षकों, पत्रकारों.साहित्यकारों ने राजापुर (गोण्डा) के जन्म भूमि होने की पुष्टि की । सनातन धर्म परिषद की बम्बई संगोष्ठी (१९९८) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग संगोष्ठी तथा हिन्दी संस्थान लखनऊ में आयोजित संगोष्ठी का भी यही प्रतिपाद्य रहा। परिषद् ने अनूप जलोटा, श्री लल्लन प्रसाद व्यास आदि के कई कार्यक्रम यहां आयोजित करायें हैं। विगत २ अगस्त १९९९ को राजापुर (गोण्डा) में आयोजित संगोष्ठी में पं० राम किंकर उपाध्याय जी ने घोषणा की 'आज मैं गोस्वामी जी की जन्म भूमि में आ गया हूँ'। इस गोष्ठी में अयोध्या के अनेक सन्तों तथा कई प्रमुख हिन्दी विद्वानो ने अपने–अपने उद्‌गार व्यक्त किए जिनमे उल्लेखनीय है– सर्वश्री नृत्यगोपालदास जी, माधवाचार्य जी, राममंगल दास जी, पं० बलदेव प्रसाद चतुर्वेदी, रामानुजाचार्य जी, स्वामी पुरषोत्तमाचार्य जी। इसी क्रम मे २० अगस्त १९९९ को वाल्मीकि भवन, अयोध्या में "तुलसी सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमे पं० श्री पति मिश्र एवं स्वामी नृत्यगोपालदास ने सूकरखेत के पक्ष मे महत्वपूर्ण वक्तव्य दिये। वस्तुतः सनातन धर्म परिषद् और डॉ० भगवदाचार्य की सक्रियता इस क्षेत्र में सर्वाधिक सराहनीय है।

राजापुर गोष्ठी

'तुलसी सेवा समिति' राजापुर (बाँदा) की ओर से १० अगस्त १९९७ को एक सगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमे अनेक विद्वान (तुलसी विशेषज्ञ) सम्मिलित हुए। इस अवसर पर "राजापुर तुलसी की गाथा" नामक एक स्मारिका भी लोकार्पित की गयी। इस स्मारिका का समवेत स्वर यही है कि विद्वानों ने राजापुर (बॉंदा) के अतिरिक्त तुलसीदास की जन्म स्थली अन्यत्र होने की सम्भावना व्यक्त की है, जो विकृत मस्तिष्क का अनर्गल प्रलाप है। और यह एक षड़यन्त्र है। इन विद्वानो के मतानुसार तुलसी जन्म स्थली का विवाद ही नही उठाया जाना चाहिए था। वे यह तो मानते हैं कि राजापुर (ऑंदा) में तुलसी के पैदा होने का कोई पुष्ट प्रमाण (यानी सनद) नही है, लेकिन पिछले २०० वर्षों से राजापुर (बाँदा) को ही अधिकतर विद्वानों ने जन्मस्थली मान रखा है, इसलिये उसके समक्ष अब प्रश्नचिन्ह नहीं लगाया जा सकता है। इन विद्वानों को यह समझा पाना कठिन हो गया है कि अनुसंधान के क्षेत्र में कोई भी मान्यता अंतिम नहीं होती, इसलिये नये तथ्यो एव तर्कों के आधार पर पुनः पुनर्विचार करते रहने के लिये हमें अपने मस्तिष्क के गवाक्ष सदैव खोल कर रखने होंगे।

इन संगोष्ठियों में जितनी दलीलें दी गयी हैं, वे दीर्घकाल तक तुलसी के चित्रकूट वासी होने का प्रमाण हैं, जबकि प्रश्न जन्मस्थली का है। प्रसिद्ध उक्ति है--"**वादे वादे जायते तत्वबोध :**। हमें आशा करनी चाहिए कि इन विचारगोष्ठियो द्वारा हम कभी न कभी किसी समवेत निष्कर्ष पर पहुंचेगें। अब वह समय दूर नहीं है, जब क्षेत्रीय राजनीति अथवा रागद्वेष का ज्वर और ज्वार थम जायेगा मानसकार की अन्तःप्रेरणा से हिन्दी लोकमानस में सद बुद्धि पूर्ण साहित्यिक न्याय का संचार होगा और तब नीर क्षीर विवेक के सहारे तुलसी की जन्मस्थली का सगत समाधान भी प्राप्त हो जायेगा।

तुलसी जीवनवृत्त : विभिन्न तिथिक्रम

गोस्वामी जी के जीवनवृत्त के सम्बन्ध मे विभिन्न तिथियों के उल्लेख किये गये हैं। उन पर भी विचार करना आवश्यक है। उनके जीवन की प्रमुख घटनाओं और रचनाओं के वर्ष विद्वानों ने इस प्रकार निर्धारित किये हैं—

१. जन्म सं० १५५४ श्रावण शुक्ल सप्तमी

२. यज्ञोपवीत (सं० १५६१) शिक्षा रामानंद पीठ काशी में गुरूशेष सनातन जी के साथ ।

३. रामलला नहछू की रचना– (सं०१६१६) पार्वती मंगल (१६१६) जानकी मंगल (१६१६) ४. गीतावली की रचना सं० १६१६ ५.. श्री कृष्ण गीतावली की रचना (१६१६ से १६२८ के मध्य) ६ कविन्त रामायण (कवितावली) – १६२८ ७. 'श्री रामचरितमानस' रचनारंभ– वैशाख–६,१६३१ समाप्ति–रामविवाह–सं० १६३३ ८. विनय पत्रिका सं० १६३६ ६. दोहावली, सं० १६४० १०. सतसई, सं० १६४२ ११. बरवै रामायण, हनुमान बाहुक, बैराग्य–संदीपनी ,रामाज्ञाप्रश्न सं० १६७० ।१२. निधन श्रावण कृष्ण–३सं० १६८० ।

इन तिथियों से स्पष्ट है कि उनका रचनाकाल ६२ वर्ष की अवस्था से शुरू हुआ और ११६ की आयु स० १६७० (५४वर्षो) तक चलता रहा।

१३. जीवन के अन्तिम १० वर्षों तक गोस्वामी जी ने कोई लेखन कार्य नही किया।

१४. उन्हें कुल १२६ वर्षों का जीवन मिला। इस अवधि मे उन्होंने अकबर (१५६३–१६०५),जहांगीर (१६०५–१६२७) शाहजहॉ और औरंगजेब का शासन–काल देखे।

कहाँ है राजापुर?

तुलसी विषयक एक जीवनी ग्रंथ–"घटरामायण" में राजापुर जमुना के तीरा। तहँ तुलसी का भया सरीरा" का उल्लेख हुआ है। इससे पहला अर्थ निकाला गया बाँदा जिले की मऊ तहसील में स्थित राजापुर नामक कस्बे का। बाँदा गजेटियर के अनुसार जमुना के तट पर बाँदा जिले से ५५ मील और कर्वी से १८ मील की दूरी पर स्थित इस कस्बे का दूसरा नाम विक्रमपुर (मौजा मझँगवाँ) बताया गया है। राजापुर किसी समय बहुत बड़ा औद्योगिक केन्द्र था। आचार्य कृष्ण दत्त बाजपेयी ने वहाँ कुषाण कालीन मंदिर और अकवर कालीन अवशेष खोजे हैं। गजेटियरो के अनुसार राजापुर में कपास और पत्थर की बड़ी मंडी थी। एक गजेटियर में उल्लेख है कि अकबर के शासन–काल में संत तुलसीदास ने सोरों से आकर इस जंगल में साधना की थी। उनके शिष्यों ने यहीं उनके लिए एक भवन (कुटीर) बनवा दिया था। कालांतर में अनेक नामों से उन्होंने एक गाव की स्थापना की–राजापुर,रजियापुर या दूबन का पुरवा। यहां रहते हुए कई शासकों द्वारा उनके शिष्यों को माफीनामे दिये गये। यहाँ तुलसी की प्रस्तर मूर्ति तथा 'रामचरित मानस' की एक खण्डित पाण्डुलिपि सुरक्षित है।

जिला गजेटियर बाँदा (१९०९) खण्ड २१, पृष्ठ २८५, तथा इपीरियल गजेटियर (खण्ड १) बुन्देल खण्ड, कलकत्ता १९०८ में यह उल्लेख है कि मंझगवाँ मौजा में स्थित राजापुर नामक कसबा जनश्रुति के अनुसार 'रामायण' के रचयिता तुलसीदास द्वारा स्थापित किया गया था।

उपर्युक्त गजेटियरों से यह संकेत मिलता है कि–

(१) राजापुर की स्थापना तुलसीदास द्वारा हुई थी। ऐसी स्थिति में राजापुर तुलसी की जन्म भूमि कैसे ? गजेटियर मे इन्हें रामायण का रचयिता कहा अवश्य गया है, किन्तु ये मानसकार गोसाई तुलसीदास न होकर कोई सिद्धसंत लगते है। सम्भव है कि वे सोरो से आये हों अथवा कोई अन्य तुलसीदास हों।

(४) कुछ विद्वानों ने यह संदेह व्यक्त किया है कि राजापुर जैसे गैर धार्मिक (मात्र व्यावसायिक) स्थान पर तुलसीदास के जा बसने का क्या कारण था? यो किसी भी रमता जोगी का कही भी बस जाना अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता है। सभव है, यमुना के तट पर यह बीहड वनांचल तुलसीदास को रुचिकर लगा हो। वहाँ शिष्य मंडली की विशेष सहायता उन्हें मिल गयी हो। फलतः वे वही बस

गये हों और फिर यह गांव (राजापुर) बसा दिया हो! ऐसी जनश्रुति है कि गोस्वामी जी ने यह व्यवस्था की थी कि यहाँ कोई पक्की ईंटो का मकान न बनाये और गाव में कुछ विशेष जातियां न बसायी जायें।

५. यह भी तर्क दिया गया है कि राजापुर राजासाधु का बसाया हुआ है। यमुना के घाट से जो मूर्ति प्राप्त हुई है उसे तुलसी की प्रतिमा न मानकर राजासाधु की प्रतिमा मानना चाहिए, क्योंकि मूर्ति में ललाट पर जो साम्प्रदायिक छाप अंकित है, उससे तुलसीदास का कोई संबन्ध नहीं रहा है।

६. तुलसी जन्मभूमि के रूप में राजापुर की सर्वाधिक चर्चा विगत दो शताब्दियों में हुई है। ज्ञातव्य है कि 'भक्तमाल' में राजापुर का नाम नहीं है। जब अग्रेज इतिहासकारों ने इसे समर्थन दे दिया तो यह जनश्रुति लोक मान्यता जैसी बन गयी। यह भी स्मरणीय है कि अंग्रेज लेखकों ने राजापुर की जगह हाजीपुर (गार्सांदताँसी) हस्तिनापुर (एच.एस. विल्सन) दुवाबा तारी (गियर्सन) आदि को भी जन्म स्थल कहा है। कारपेंटर, की, मैग्डोगल, ग्रीफ़्स , मैक्फी, तेस्सीतोरी आदि ने राजापुर का समर्थन कर दिया तो इसका पलड़ा भारी हो गया। इन सबसे अभिभूत होकर तुलसी के सुधी शोधक डॉ० माता प्रसाद गुप्त को कहना पड़ा कि राजापुर के पक्ष में संभावना अधिक ज्ञात होती है। यद्यपि वे मानते रहे हैं कि राजापुर तुलसी का जन्मस्थान है, यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता है (तुलसीदास पृ० १५४) सहसा गीता प्रेस के 'मानस' में राजापुर की घोषणा हो जाने के कारण तर्क और प्रमाणों के बिना जनसाधारण उसी को दोहराने लग गया। राजापुर के पक्षधर डॉ० रामबहोरी शुक्ल का तर्क है कि अंग्रेज इतिहासकारों ने राजापुर को भ्रमवश हाजीपुर लिख दिया। यह भी संभव है कि भ्रमवश राजापुर लिख दिया हो। यह संभव है, कभी किसी ने किंचित् असावधानी कर दी हो। यो ऐसे लोकप्रिय कवि की जन्मभूमि जैसे संवेदनशील प्रंसग में आज जनश्रुति से ऊपर उठना अत्यावश्यक है। उक्त गजेटियर जनश्रुतियों पर आधारित हैं, अतः बारम्बार परीक्षणीय हैं।

७. मिश्रबन्धुओं के अनुसार यह राजापुर इलाहाबाद वाला है। "शिव सिह सरोज" के पहले सस्करण में पसका नाम दिया गया था, फिर इलाहाबाद छाप दिया गया। आज का राजापुर बाँदा जिला घोषित होने से पूर्व इलाहाबाद जिले मे ही आता था।

८. गोण्डा(पसका) मे स्थित राजापुर का कोई प्राचीन इतिहास उपलब्ध नही हो रहा है। यह परसपुर और नवाबगंज के मध्य स्थित एक मध्यमस्तर का गॉव है, जो घाघरा सरयू–संगम से छः – सात कि०मी० और करनैलगंज से लगभग २० कि०मी० है। गोण्डा गजेटियर में इसका कहीं उल्लेख नहीं हुआ हे। यहॉ के निकटवर्ती गाँव पसका में तुलसी के शिष्य एव गोंसाई चरित के लेखक बाबा बेनीमाधव दास रहते थे। उनका गजेटियर में उल्लेख है। मानस–टीकाकार रामचरण दास करुणासिधु ने प्रथम बार इसकी ओर संकेत किया। सम्प्रति सूकरखेत पसका में बाराह मंदिर और नरहरि आश्रम है। यहीं 'आत्माराम का टेपरा (गोचर भूमि) स्थित है। राजापुर से ३ कि०मी० दूर कचनापुर को तुलसी की ससुराल कहा गया है। आज भी वहां दीनबन्धु पाठक के वंशजों का निवास बताया जा रहा है। इसी के निकट तुलसी की पालक चुनिया दासी का गाँव हरिपुर (रामपुर) है। इसी राजापुर के निकट है बोलपुर चौबीसी, जहॉ तुलसी के मित्र होलराय रहते थे। यही पड़ोस मे थे कवि अनीराय तुलसी के पड़ोसी या घनिष्ठ सखा । इसी के निकट है – जनपद बहराइच, जिसका गोस्वामी जी ने स्पष्ट उल्लेख किया है। तात्पर्य यह है कि तुलसी से जुडे अनेक व्यक्ति और स्थान इस राजापुर से जुडे हुए हैं। ३०० वर्ष पूर्व, जब गोण्डा जिले का पृथक् अस्तित्व नही था यह राजापुर गाँव अयोध्या जिले में आता था। आज भी यह स्थान अयोध्या की ८४ कोसी परिक्रमा में समाविष्ट है।

९. कुछ विद्वानों का तर्क है कि जहॉ पसका के संदर्भ मे गोस्वामी जी के शिष्य बेनीमाधव दास का उल्लेख किया गया है तो राजापुर के संदर्भ में तुलसी का नामोल्लेख क्यों नहीं हुआ? संभव है, यहॉ से प्रव्रजित होकर तुलसी इस गॉव से असंबद्ध मान लिए गये हों। जन्मभूमि प्रकरण के इतिहास से इतना तो स्पष्ट ही है कि गोण्डा गजेटियर के लेखन काल तक इस क्षेत्र से गोस्वामी जी के जुडे होने की कोई चर्चा शुरू नहीं हुई थी। संदेह किया जा सकता है 'गोसाई चरित तथा इतिहास ग्रंथों में राजापुर शब्द देखकर सूकरखेत के निकट स्थित इस राजापुर गॉव को 'डुप्लीकेट' तुलसी जन्म स्थली बना दिया गया हो। वर्तमान प्रशासनिक राजनीतिक परिस्थितियों में यहॉ जनता की मॉग पर जिला अधिकारियों तथा जनप्रतिनिधियों द्वारा तुलसी जन्म मंदिर, तुलसीवन, तुलसीकूप मानस सरोवर, तुलसीधाम,शोधसंस्थान आादि की व्यवस्था करा देना स्वाभाविक ही है। किन्तु मात्र जिलाधिकारी या प्रशासन द्वारा दी गयी इस मान्यता को ही

जन्म भूमि का साक्ष्य नहीं माना जा सकता। यह भी संभव है कि " राजापुर सरजू के तीरा" कथन को " राजापुर जमुना के तीरा" बना दिया गया हो, जैसा कि राजापुर गोण्डा के पक्षधर विद्वानो का तर्क है। निष्कर्ष यह है कि राजापुर के संबन्धा मे जनश्रुतियाँ तो है, किन्तु पुष्टि का कोई ऐतिहासिक आधार नही है। इसलिए बॉदा और गोण्डा (अयोध्या) के राजापुर नामक दोनो गॉवों से संबन्धित दावे का पक्ष लेते हुए इतिहासकार एल्विन ने लिखा था– In our view either Rajapur or Ayodhya are more likly than others (the misterious path of love in Tulsidas).

यह निर्णय अभी भविष्य के गर्भ में है।

कितने सूकरखेत?

गोस्वामी जी ने "रामचरितमानस" में चूँकि सूकरखेत का उल्लेख कर दिया है, इसलिये राजापुर–चित्रकूट, सोरों और राजापुर (गोण्डा) के पक्षधर अपने–अपने स्थानों को असली सूकरखेत सिद्ध करने में जुटे हुए हैं। विद्वानों ने मिलजुलकर पूरे देश में ३५ सूकरखेत खोज निकाले हैं। वस्तुतः सूकरखेत का सम्बन्ध महावाराह के उपासना–क्षेत्र से है। प्रतिहारवंशी वाराहावतार या महावाराह को आराध्य मानते हैं, इसलिये उत्तर भारत में जहाँ–जहाँ प्रतिहारों का राज्य था, वहॉ वाराह–वाराही के मन्दिर प्रायः मिल जाते हैं। चित्रकूट भी वाराहक्षेत्र में आता है। यद्यपि आज तक चित्रकूट से संबन्धित विद्वानों ने अपने आस–पास कहीं किसी वाराह मन्दिर या सूकरखेत का दावा नहीं किया था। अब तक उनकी मान्यता यह रही है कि तुलसी का जन्म यहॉ राजापुर में हुआ था। यज्ञोपवीत के पश्चात लगभग १५ वर्षों की अवस्था में वे सूकरखेत चले गये थे और वहाँ राम–कथा सुनकर और फिर काशी में "नानापुराण निगमागम" का ज्ञान प्राप्त करके साहित्य साधना में प्रवृत्त हुए थे। इस बीच उन्होनें राजापुर, अयोध्या, चित्रकूट एवं काशी मे निवास किया था।

किंतु विगत दो–तीन वर्षों में चित्रकूट के पक्षधरों को यह लगा कि इस विवाद का काफी दारो–मदार सूकरखेत पर है। इसलिये उन्होंने कामदगिरि परिक्रमा मार्ग (चित्रकूट) में एक ऐसी चट्टान खोज निकाली, जिसकी आकृति कुछ–कुछ वाराह से मिलती हुई है। पास ही दो छतारियां मिल गयीं और एक पहाड़ी गुफा अथवा झोपड़ी। इन छतरियों पर वार्निश पेण्ट से गुरु नरहरि और तुलसीदास का नाम लिखा दिया गया। वहॉ पर दो मूर्तियां रखा दी गयी और उस झोपड़ी को नरहरि आश्रम का नाम दे दिया गया। अर्थात् सूकर खेत वाराह मन्दिर और नरहरि आश्रम सब चित्रकूट मे ही प्रकट हो गये। पहले यह तर्क दिया जा रहा था कि राजापुर (बॉदा) में उत्पन्न कोई बालक लगभग ३५० किमी० की यात्रा करके सारों वाले अथवा लगभग २०० किमी० दूर पसका (गोण्डा) वालें सूकर खेत तक कैसे पहुॅच पायेगा? वहा बार.बार कैसे जा सकेगा? जबकि परिवहन के साधन थे नहीं? इस तर्क को निरुत्तर करने के लिये राजापुर से मात्र ३० किमी० की दूरीं पर ही अब सारी व्यवस्था करा दी गयी है। चित्रकूट जैसे पवित्र तीर्थ मे

ढूढने से न जाने कितनी गुफायें, अनाम खण्डित मन्दिर, छतरियाँ या समाधियाँ मिल जायेगी। मात्र एक झण्ड़ा और एक साइन बोर्ड लगाकर रातो–रात कोई भी साक्ष्य तैयार किया जा सकता है। यह अपकृत्य मात्र इस कथन का प्रमाण है कि राजापुर चित्रकूट के पक्षधरों को अपना दावा दुर्बल प्रतीत होने लगा है और वे अब उसकी क्षति पूर्ति के लिये अन्य प्रकार के कृत्रिम साक्ष्यो को प्रायोजित करने में लगे हुए हैं।

मेरा विनम्र मत है कि सूकरखेत मुख्य दो ही हैं। एक, सोरों, दूसरा पसका। गोस्वामी जी ने जिसे सूकर खेत की ओर संकेत किया है, वह अयोध्या का निकटवर्ती ही होगा। उनका आत्मकथ्य है कि वे अयोध्या में ही जनमे थे। प्राप्त तथ्यों से अनुमान होता है कि बचपन में अनाथ तुलसी को संभव है, किसी सत महात्मा ने उनकी दशा पर तरस खाकर उन्हें पसका के नरहरि आश्रम तक पहुॅचा दिया होगा। गुरु की छत्रछाया में उन्होंने अपना किशोर काल बिताया। वहीं कई बार गुरुमुख से रामायण भी सुनी। यहीं से अग्रेतर अध्ययन के लिये काशी के शेष सनातन जी की सेवा में जाने का संकेत प्राप्त होता है। सूकरखेत का एक अर्थान्तर डॉ० उदयशंकर दुबे ने दिया है। उन्होंने चौदह पाण्डुलिपियों के संदर्भ दिये है और सूकरखेत के चौदह पाठ–भेद बताये हैं–

(१) सूकर खेत (२) सूकुर खेत (३) शिष्यकुरु खेत (४) सोईकुरु खेत (५)जाइ कुरुखेत (६) रूचिर कुरुखेत (७) सुरस कुरुखेत (८) सुकुरुखेत (६) सुमग कुरुखेत (१०) सुकूरुखेंत (११) सुथह् कुरुखेत (१२) शेष कुरुखेत (१३)सुथल् कुरुखेत।

ये पाण्डुलिपियां सं०१७७६ से १६०० विक्रमी तक की बतायी गयी है। लेखक के अनुसार इनकी प्राप्ति बाराणसी, दतिया, ग्वालियर, छतरपुर आदि स्थानों से हुई है। इन विभिन्न पाठ–भेदों के सहारे डा० दुबे ने कुरुक्षेत्र (हरियाणा) को सूकरखेत सिद्ध करना चाहा है। मेरे विचार से डा० दुबे गंभीर तत्वान्वेषी है किन्तु विचित्र कहने के अभिलाषी भी। वे कर्तुमकुर्तमन्यथा कर्तुसंमर्थ हैं। मैं इसे उनका बुद्धि–विनोद ही मानता हूॅ। जैसा पूर्व में 'निवेदन किया जा चुका है, मात्र दो ही सूकरखेतों तक सीमित रहकर ही इस विवाद का निराकरण संभव होगा।

पसका के सूकर खेत के पक्ष में मुख्यतर्क हैं –

१– मूल गोसाई 'चरित' में इसीका उल्लेख है –"कहत कथा इतिहास बहु आए सूकरखेत। संगम सरजू धाधरा संत जनन सुख देत।"

२– कृष्ण दत्त मिश्र की 'गौतम चंद्रिका ' में इसे अयोध्या की ८४ कोसी परिक्रमा में पसका के निकट कहा गया है।

३– संत उन्मनी दास की 'मानस–टीका (१६८६ ई०) में इसे वाराह क्षेत्र अयोध्या के पश्चिम में बताया गया है।

४– मानस की जानकीदास कृत टीका (नवल किशोर प्रेस लखनऊ) में इसे पसका में स्थिर किया गया है।

५– राम चरण दास कृत 'मानस टीका (१८८०) में इसे अयोध्या के निकट माना गया है।

६– 'मानस' के प्रथम टीकाकार करुणा सिन्धु ने इसी को सूकरखेत कहा है।

७– "शिवसिंह सरोज" मे तुलसी और वेणीमाधौ दास को इसी स्थान से सबद्ध धोषित किया गया है।

८– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि सूकरखेत को भ्रम से सोरो मान लिया गया है। सूकर खेत गोण्ड़ा जिले में सरयू के किनारे एक पवित्र तीर्थ है जहां आस–पास के लोग स्नान करने जाते हैं। यहां मेला लगता है" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ १२६)

६– सर्वप्रथम पसका को सूकरखेत भवानी दास (गोसाईचरित) ने कहा– जो श्री गुरूवर सिह सन सुनी कथा लहिज्ञान। त्रय यौजन है अवधते " यहा गोस्वामी जी के रुकने का विस्तृत विवरण है।

१०– सरस्वती, जून १६४३ में डा० भगवती प्रसाद सिंह ने इसका विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया।

११– स्कंदपुराण के अयोध्या खण्ड मे 'सरयू नद्या घार्घरोंदकसंगमें' से इसी सूकरखेत का संकेत निकाला जा रहा है।

१२. पं० वेदव्रत शास्त्री का मत है कि पसका तीर्थ न होकर मात्र घाट था, किन्तु सैकड़ों वर्षो से लग रहे पौष मेले को देखकर यह मत स्वतः निरस्त हो जाता है।

१३. सूकरखेत के संगम को 'तिमुहानी' कहा जाता है। मानस टीकाकार अजनीशरण जी के अनुसार वह सरयू धाधरा और शोण का संगम है। यो गगा को भी त्रिमुहानी (त्रिपथगा) कहते है। इस सन्दर्भ में अनाम सीता नदी का भी नाम लिया जाता है।

१४. सोंरो के पक्षधर 'तुलसी प्रकाश' का यह उदाहरण देते है– 'गगा

दच्छिन कूल इक ताल नाम सुथान। सूकर-खेत समीप रामपुराही।

१५. इसी प्रकार "गंगा सूकर खेत भा बाभन तुलसीदास" (घटरामायण तुलसीदास हाथरसी) का कथन उद्धृत किया जाता है।

१६. सूकर क्षेत्र सोरों की व्युत्पत्ति भी सूकर ग्राम,सूकर गॉव, सुअर गॉव, सुवरॉव, सोवरो,.सोरो' पद्धति से सिद्ध की गयी है, किन्तु प्रश्न यह है कि विस्तृत क्षेत्र को 'ग्राम' में कैसे सीमित किया जा सकता है? स्वाभाविक तो यह लगता है कि सोरों सुकृत्य, सोरम, सौकरम शब्द से विकसित हुआ हो।

१७. सोरों के पुरातात्विक अन्वेषण से उसकी महत्ता सिद्ध हो चुकी है। कासगंज तहसील के अन्तर्गत स्थित यह तीर्थ एटा से २७ मील (बरेली हाथरस रोड पर बुढ़गगातट) पर विधमान है। खसरा १६०२ ई. में मुहल्ला जोग में थनाई शुक्ल का मकान और मुहल्ला चौधरियान मे नरसिंह जी का मदिर है, पर वहाँ तुलसी नरहरि का कहीं नाम नहीं है। ऐसी स्थिति में पसका का सूकर खेत ही अधिक मान्य है।

कितने तुलसी?

हिन्दी साहित्य के इतिहास में निश्चय ही एकाधिक तुलसीदास हुए हैं। डा०किशोरी लाल गुप्त द्वारा 'सरोज सर्वेक्षण ' में अनेक तुलसीदास गिनाये गए है जैसे —

१.सतसईकार तुलसी
२.लोकगायक तुलसी
३.तुलसीदास निरंजनी
४.'घटरामायण'के रचयिता तुलसी साहिब
५.ज्योतिषी तुलसी
६.'ब्रजवासी तुलसी
७.'रसकल्लोल' और 'रसभूषण' के रचयिता तुलसी
८.शिवाजी और भूषण के समकालीन ''पवॉड़ा सिंह गढ़ विजय'' के रचयिता तुलसी
९.पंजाबी कवि इन्द्रजीत कवि तुलसी
१० मेरठ के तुलसी आदि।

इनमें कई नाम साझे के भी हो सकते हैं। एक व्यक्ति अपने जीवन काल में कई–कई स्थान बदलता है। कोई चाहे तो मेरठ से ब्रज और यहॉ से पंजाब या महाराष्ट्र तक जा सकता है। संभव है कि एक कवि कहीं लोक गायक रहा हो कहीं नीतिकार हो गया हो, कहीं ज्योतिषी बन गया हो, कहीं प्रशस्तिकार हो गया हो और कहीं लक्षण ग्रन्थों का रचयिता आचार्य कवि बन गया हो। यों पूर्वोत्तर भारत (पूर्वाचंल) में तुलसी/तुलसीदास नामकरण बहुत लोकप्रिय है। इसलिए मध्य युग में इस नाम के एक आध दर्जन समकालीन कवि निकल आयें तो आश्चर्य की बात नहीं है।

दूसरी एक सूची प्रसिद्ध कथा वाचक बंदन पाठक ने दी है। उनकी मान्यता के आलोक में बालक राम जी विनायक ने एक ''तुलसीनामावली'' प्रस्तुत की है। इस संबंध में एक लेखमाला जबलपुर के 'युगधर्म' के १४ जुलाई १९८५ मे आठ अंकों में प्रकाशित हुयी थी। इसके पीछे महंत गंगादास जी का कुछ अपना शोध कार्य रहा है। इन सबके अनुसार चार तुलसीदास बताए जा रहें है——

प्रमाण स्वरूप बंदन पाठक द्वारा रचित कविता के ये अंश प्रस्तुत किये गये है

"तैसे तुलसी चारि भये हैं नर भाषा के ।
चारो बरने रामचरित भगती रस छाके ।
एक महारिषि आदि कवि द्विज बंदन भये शापवश ।
मानसजुत बारह रतन प्रकटे धारे शांत रस ।।
दूजे तुलसी तुलाराम जी मिसिर पयासी ।
देवीपाटन जनमकुटी तुलसीपुर बासी ।
तीसरि पत्नी रत्नावली कटु बचनहिं लागी ।
रोवत चले बिसारि भवन भये रसिक बिरागी ।
रामायन तिनहू रचे लवकुश मानस संत हित ।
द्विज बंदन 'जानकी विजय',गंगा कथा, क्षेपक सुकृत ।।
तीजै तुलसी जनम नाम शुचि सोरों वारे ।
छप्पय, छन्दावली, कुण्डलियां, कड़खा चारे ।
चौथें तुलसी संत हाथरस वारे भारी ।
'घंट रमायण' रचे सोहागिन सुरति बिहारी ।।
द्विज बंदन तीनों कथै श्रीमानस छाया छुए ।
मानस अधिकारी भले नाम उपासक सब भए ।।

इनके अनुसार मध्य युग में समानान्तर ये चार तुलसी हुए हैं--

(१) मानस कार तुलसी
(२) देवीपाटन (तुलसीपुर) वाले तुलाराम मिसिर उर्फ तुलसी
(३) सोरों (जिला एटा) वाले तुलसी
(४) हाथरस वाले संत तुलसी ।

इन चारों की जन्ममृत्यु--तिथि, माता--पिता पत्नी आदि से युक्त व तथा रचनाओं का उल्लेख इस प्रकार किया गया है--

ण	मानसकार तुलसी	तुलाराम तुलसी	सोरोंवाले तुलसी	हाथरस तुलसी साहि
जन्मतिथि	श्रावणशुक्ल ७ संवत १५५४	चैत्रशुक्ल एकादशी संवत् १६८७	उपलब्ध नहीं	१८२० संवत
न्मभूमि				

२.	जन्मस्थान	राजापुर	देवीपाटन	सोरों	हाथरस
३	निधनतिथि	श्रावणकृष्ण ३ संवत् १६८०	—	—	ज्येष्ठ शुक्ल संवत् १८६६ या १६००
४.	बचपन का नाम	रामबोला	तुलाराम	तुलसीदास गोसाई	तुलसी साहिब
५	पिता का नाम	आत्माराम दुबे	मुरारि मिश्र	—	—
६.	माता का नाम	हुलसी देवी	—	—	—
७	पत्नी का नाम	(अविवाह)	रत्नावली (तीसरी पत्नी)	रत्नावली	—
८.	बचपन की आर्थिक दशा	अति दरिद्रता युक्त	धनधान्य सम्पन्न	सामान्य	सामान्य
९.	वैराग्य का कारण	आत्मप्रेरणा	पत्नी के वाक्‌वाण	पत्नी से प्रेरणा	आत्म प्रेरणा
१०.	जीवनी के स्रोत	मूल गोसाई चरित, भवानी दास (बाबा बेनीमाधवदास)	१. इतिवृत तुलसी २. तुलसी चरित	१. गुलिस्तां —ए—बेदिल २. तुलसी तत्व प्रकाश	आत्मचरित धटरामायण
११.	ग्रन्थ	रामचरित मानस गीतावली कविता वली विनय पत्रिका दोहा वली जानकी मगल पार्वती मंगल वैराग्य संदीपन रामलला नहहू, कृष्णगीतावली, रामाज्ञा प्रश्न, बरवै रामायण	लवकुश काण्ड, गंगावतरण, जानकीस्तव दंड,क्षेपक, स्फुट	छप्पय रामायण, कुंडलिया रामायण, छंदावली रामायण कडरवा रामायण	धटरामायण

१२	प्रकाशक	गीता प्रेस गोरखपुर	वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई	मुशी नवल किशोर प्रेस लखनऊ	वेल्वेडियर प्रेस, इलाहाबाद १८७४ ई०

सोरों वाले तुलसी सनाढ्य शुक्ल कहे गये है, जबकि गोण्डा वाले सरवरिया दुबे। धट रामायण में उन्हें कान्यकुब्ज लिखा गया है। '२५२ वैष्णवन की वार्ता' मे उल्लेख है– "नंद दास के बड़े भाई तुलसीदास हते।" सूकर क्षेत्र महात्म्य मे नददासात्मज कृष्णदास ने,"बंदहुँ तुलसीदास पितु बड़भ्राता" कहा है। यत्र तत्र नददास को गुरु बंधु कह दिया गया है। इन विवरणों का जन्मभूमि से प्रत्यक्ष नाता नहीं है।

चित्रकूट राजापुर (बॉदा) में मानसकार तुलसी रहे है अवश्य, किन्तु वे कहॉ जनमे थे इसका प्रमाण प्राप्य नहीं है। देवी पाटन तुलसीपुर,बलरामपुर जनपद के गॉव है। यहॉ उत्पन्न तुलसी दास पयासी के मिसिर थे। डा० राजबली पाण्डेय द्वारा लिखित क्षत्रियों के इतिहास के अनुसार इनके पूर्वज मूलतः बॉसडीह मॅझौली हजला देवरिया के रहने वाले थे। यह जनश्रुति है कि उनके पूर्वज अकाल पीडित होकर बाराही देवी के मंदिर में पुजारी हो गये थे। वहीं पुत्र तुलाराम (कालांतर मे तुलसी) का जन्म हुआ। "तुलसीचरित" (रघुवरदास) के अनुसार इनके तीन विवाह बताये गयें हैं। इनकी तीसरी पत्नी रत्नावली थी। कहा जाता है कि "लवकुश काण्ड" इन्ही के द्वारा रचित है। इसके अन्य कई काव्यों का भी उल्लेख प्राप्त हुआ है।

सोरों के तुलसी छप्पय, छन्दावली,कुंडलियॉ,रामायण के रचयिता बताये गयें है। छदावली और कुंडलिया रामायण वस्तुतः बाराबंकी के बाबा बैजनाथ कुर्मी की रची हुयी है। उनके आवरण पृष्ठों पर 'तुलसी रचित' शब्द विनय भावना वश डाल दिये गये हैं। ये कृतियां नवल किशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित हुयीं थी।

इन साक्ष्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हनुमान चालीसा लवकुश काण्ड, क्षेपक और कड़खा आदि के रचयिता कोई पृथक् तुलसीदास हैं। बदन पाठक का यह कथन अन्तिम रूप से स्वीकार्य तो नहीं, पर विचार्य अवश्य है। यदि इन एकाधिक तुलसीदासो का स्वरूप स्पष्ट हो जाये तो जन्म स्थल विवाद का स्वतः समाधान मिल जाये।

एक स्थूल तथ्य यह है कि शुक्ल,दुबे,मिश्र इन तीन आस्पदो और सनाढ्य,कान्यकुब्ज सरयूपारीण इन तीन उपजातियों से जुड़े हुए कम से कम तीन तुलसीदास तो हुए ही हैं।

इसी प्रसग में डा० भगवान सहाय पचौरी की स्थापना भी विचारणीय है।'ब्रजभारती' पत्रिकासं०१६३१ में प्रकाशित अपने अभिमत द्वारा उन्होंने राजापुर बॉदा वाले तुलसीदास को हनुमान चालीसा का रचयिता माना और मानसकार, तुलसी को सूकर खेत का निवासी। अस्तु ; १०,४ या ३ संख्याओ में भेद है, किन्तु इसमें मतभेद नही होना चाहिए कि मध्ययुग में एकाधिक तुलसीदास समानान्तर साहित्य-रचना कर रहे थे। इनमें मानसकार तुलसी जन्मना अयोध्या से संबद्ध थे।

कितने नरहरि

गुरु नरहरि को रामानंदी सम्प्रदाय में दीक्षित साधक तथा अग्रदास एवमं अनंतानद का सुशिष्य कहा गया है। पसका (गोण्डा) में स्थापित बाराह मंदिर से भी नरहरि दास का संबंध बताया गया है। जनश्रुति है कि यहॉ के तत्कालीन राजा धौकत सिह ने मंदिर की पूजा–अर्चना के लिए एक अच्छी वृत्ति लगा दी भी। यहां कुटी मे नरहरिदास की वंशावली है जो खण्डित तथा प्रक्षिप्त प्रतीत होती है। कहा जाता है कि मूल कृति लुप्त हो गयी या भ्रष्ट कर दी गयी है। इसमें कई नरहरि हैं। एक नरहरि तुलसी से बहुत पहले हुए हैं। इसी वंशावली में रामानंदी सम्प्रदाय के किन्ही गुरु नरसिंह दास का उल्लेख मिलता है, जो तुलसी के परवर्ती हैं। उनका कुछ तालमेल तुलसी के बाल्यकाल से बैठाया जा सकता है। 'गोसाँई चरित' में संभवत इन्हीं की ओर संकेत है। कुछ विद्वानो का मत है कि 'कृपासिन्धु नररूपहरि' लिखकर गोस्वामी जी ने इन्हीं का उल्लेख किया है। पसका में अग्रदास का अखाड़ा अभी सुरक्षित है। अग्रदास जी राजस्थान में दौसा की गद्दी पर प्रतिष्ठित थे और पसका मे यदा–कदा प्रवास करते थें। 'भक्तमाल' में नाभादास ने स्वय को और नरसिंह दास को अग्रदास का शिष्य बताया है। इन तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि नरहरिदास का सबंध सूकर खेत से और तुलसीदास से रहा अवश्य है। श्री अवध नारायण सिंह ने १८४४ की मानस प्रति में उल्लिखित नरसिंह को तुलसी गुरु–रूप में सिद्ध करने का प्रयास किया है। सन्देह का एक आधार यह है कि पसका के राजा ने जिन नरहरि दास को मुआफी दी थी, उनकी मात्र आठ पीढ़ियां संवत १६६० तक पूरी हुई हैं। इसका तात्पर्य यह है कि ये नरहरि लगभग ढ़ाई सौ वर्ष पुराने हैं। डा० माता प्रसाद गुप्त ने इसी तर्क द्वारा सिद्ध किया है कि गुरु नरहरि तुलसी के समकालीन न होकर परवर्ती हैं। सम्प्रति पसका स्थित कुटी–नारायणदास से संबंधित है। वहां के वर्तमान महंत द्वारकादास जी के कथनानुसार इस गद्दी की परंपरा का साक्ष्य अपहृत करके (तत्कालीन एस०डी०एम०श्री अयोध्या प्रसाद पाण्डेय) द्वारा विकृत कर दिया गया है। इस आरोप का कोई प्रामाणिक साक्ष्य नहीं मिला है। लोकमान्यता में यह आश्रम वही मूल सूकर खेत है, जहॉ तुलसी ने गुरू नरहरि से रामायण का श्रवण–लाभ किया था।

सौंरो वाले नरसिंह

चक्रतीर्थ मोहल्ला सोरो में नरसिह चौधरी की एक पाठशाला और मोहल्ला चौधरिया में एक नरसिंह मन्दिर का उल्लेख एटा गजेटियर १६०६ में किया गया है। ऐसा कहा जाता है कि इनकी बीसवीं पीढ़ी इन दिनों चल रही है, किन्तु इसके पुष्ट प्रमाण कहीं प्राप्त नहीं हैं। मानस के एक दोहे (मै पुनि निज गुरुसन सुनी) के अतिरिक्त यहाँ का कोई स्थानीय साक्ष्य ऐसा नहीं है, जिसके सहारे गोस्वामी जी को इनका शिष्य सिद्ध किया जा सके। डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसे मंदिर धोषित किया है।

चित्रकूट वाले नए नरहरि

कामदगिरि–परिक्रमा मार्ग मे इधर कुछ वर्षो में एक नए नरहरि की खोज कर ली गयी है। वहाँ दो समाधियों या छतरियों के ऊपर नरहरि और तुलसीदास के नाम लिख दिए गए हैं। पास की एक झोपड़ी को 'नरहरि की कुटी' रूप मे नामित कर दिया गया। पहाडों और चट्टानों पर पत्थरों की भाँति–भाँति की आकृतियां बन जाती है। एक प्रस्तर पिंड पशु के आकार का दिख रहा है। उसे महावाराह के रूप में प्रचलित /प्रचारित कर दिया गया और उसके सहारे पूरे क्षेत्र को वाराह क्षेत्र अर्थात् सूकर क्षेत्र कहा जाने लगा है। इससे पहले राजापुर (बाँदा) वाले वहाँ सूकरखेत और नरहरि का यह दावा नहीं करते थे। यह नई संरचना मेरे इस कथन की साक्षी है कि ये पक्ष रातों–रात नकली साक्ष्य जुटाने की अंध स्पर्धा में लगे हुए हैं। 'तुलसी चरित' में अवध क्षेत्र के गांव 'कविराज का पुरवा' के नरहरि महापात्र का उल्लेख किया गया है। जो अकबर के दरबारी कवि थे। इन्होंने गोवध बद करवाया था और कई चमत्कार दिखाए थे। डॉ० विपिन बिहारी त्रिवेदी इन्हें असनी (फतेहपुर) का मानते रहे हैं। यह भी जनश्रुति है कि अन्त में वे पसका से सोरों में जा बसे थे। संभव है, उनके आश्रम (पसका, सूकरखेत) मे गोस्वामी जी को कैशोर काल में शरण मिली हो। कालान्तर में उनसे मिलने वे सोरों एव फतेहपुर जाते रहे हों, जो राजापुर–चित्रकूट के सन्निकट भी है। इस प्रकार नरहरि की तीनों प्रतिच्छवियां एक ही व्यक्तित्व में समाहित हो जाती हैं।

मेरे विनम्र मतानुसार पसका को तुलसीदास द्वारा सन्दर्भित सूकरखेत मानना और वहाँ गुरु नरहरि की विद्यमानता को स्वीकार करना अपेक्षाकृत अधिक तथ्याश्रित है।

तुलसी की तथोक्त ससुरालें तथा रत्नावली प्रकरण

गोस्वामी जी के जीवनवृत्त में चूंकि रत्नावली के प्रति मोहासक्ति, फिर पत्नी द्वारा प्रबोध और फिर गृह त्याग की घटनाएं बहुत चर्चित हो गयीं हैं, इसलिए उनकी जन्मभूमि का दावा करने वाले तीनों पक्षों ने एक–एक गॉव में उनकी ससुराल भी स्थापित कर दी हैं। राजापुर (बॉदा) के विद्वानो ने महेवा को उनकी ससुराल कहा है। यह गाँव यमुना के उत्तर मे ओर फतेहपुर की दक्षिणी दिशा मे राजापुर से लगभग २० कि०मी० की दूरी पर इलाहाबाद की सिराथू तहसील मे स्थित है। सम्प्रति राजापुर और महेवा के बीच कोई नदी नही पडती, इसलिए नदी तैर कर ससुराल पहुंचने वाली घटना की पुष्टि नही हो पा रही है। 'तुलसी चरित के अनुसार भट्टपुरवा, अयोध्या के राजकवि दिलराय अनीराम की बहन बुद्धिमती से तुलसी का विवाह हुआ था। किंतु इसे अधिक जनसमर्थन नही मिला है।जन्म भूमि के दूसरे दावेदार–सोरों के विद्वानों ने एटा जिले के बदरिया गाँव को तुलसी की ससुराल घोषित किया है। उनका दावा है कि वहाँ तुलसी के श्वसुर दीनबन्धु पाठक के वंशज अभी विद्यमान हैं। किन्तु यहॉ भी नदी का भूगोल साथ नही दे रहा है।

राजापुर (गोण्डा)के पक्षधरों ने पहले गॉव कचनापुर को तुलसी की ससुराल कहा। रघुवर दास के 'तुलसीचरित' के अनुसार कचनापुर के लक्ष्मण उपाध्याय की पुत्री रत्ना से उनका विवाह हुआ था। किन्तु इधर ससुराल के प्रश्न पर गोण्डा का यह पक्ष मौन हो गया है। इन तीनों स्थानों में ससुर का नाम दीनबन्धु या दीनदयाल पाठक और पत्नी का नाम रत्नावली कहा गया है। अपवाद रूप से मात्र 'तुलसी चरित' में तुलसी की पत्नी का नाम 'ममता' भी लिखा गया है।

'तुलसी चरित' में देवीपाटन वाले तुलसी के तीन विवाहों का उल्लेख मिलता है, जिनमें रत्नावली को तीसरी पत्नी कहा गया है और दहेज का विस्तृत वर्णन किया गया है। तुलसी की पूर्व की दो पत्नियों के नाम क्या थे? सुसराल कहॉ थीं? इनका पता नहीं चलता।

वस्तुतः यह रत्नावली–प्रकरण बड़ा गंभीर प्रश्न है। सम्प्रति यह लोकमान्यता से पोषित है। दशकों पूर्व डा० रामविलास शर्मा ने इस पर सदेह किया था तो मुझे भी अद्भुत लगा था, किन्तु जब आत्म कथ्यों की शरण लेनी पडी तो इस बिन्दु पर भी पुर्नविचार करना पड़ा। निश्चय ही यह कथन बड़ा सनसनी खेज है। गोस्वामीजी ५० वर्ष की अवस्था में पत्नी पर मोहासक्त होकर उसके पीछे–पीछे अनाहूत ससुराल चले गए, जिस पर उस विदुषी (कवयित्री पत्नी) ने तुलसी की

भयंकर भर्त्सना की और तब उन्होंने प्रतिक्रिया वश या प्रबोध पाकर सम्पूर्ण विरक्ति धारण कर ली, यहॉ तक कि धर परिवार, गृह जनपद सबको त्याग दिया। यह कथा चटपटी तो बहुत है, पर विश्वसनीय नहीं लगती। तुलसी स्वकीया से मिलने गए थे, जिसे पापकर्म नहीं कहा जा सकता। फिर रात में चोरी छिपे जाने का क्या औचित्य था?

रत्नावली विदुषी और कवयित्री होकर इतनी कटु एवं अदूरदर्शी हो जायेगी यह सोचना व्यावहारिक नहीं लगता।

ससुराल जाते हुए भादों की नदी को रात में मुर्दे के सहारे पार करना असंभव तथा अतिकल्पित है। धारा में बहती हुई लाश इस तट से सामने वाले तट की ओर कैसे उन्हें ले गयी? युवा तुलसी के शरीर का इतना बोझ वह कैसे वहन कर सकी? वस्तुतः ये मनगढन्त रोमांचक 'मिथ' हैं।

रत्नावली के पिता अवश्य ही निर्धन ब्राह्मण रहे होंगे। तभी उन्होंने मंगन (याचक) कुल में अपनी कन्या ब्याही होगी। किन्तु इस कथा में रत्नावली का बहुखण्डी महल वर्णित हुआ हैं। उसकी अट्टालिका पर पहुँचने के लिए तुलसी ने लटकते हुए सॉप का सहारा लिया। इससे कथा कौतुक की वृद्धि हुई है। वस्तुत इसी प्रकार विद्योत्तमा के महल पर कालिदास को चढ़ाया गया है। इसी प्रकार वेश्याप्रेम दिखाकर सूर से प्रायश्चित कराया गया है। नागर जी ने इसी क्रम मे 'मानस का हस' में मोहिनी--प्रकरण का कथा (मिथ) गढ़ लीया है।

निष्कर्ष यह है कि समूचा रत्नावली प्रकरण मात्र कथा रूढ़ियों के सहारे खड़ा किया गया है। हमारे प्राचीन वांग्मय में ऐसे लोम हर्षक कथा कौतुक भरे पडे हैं। आज के यथार्थवादी लेखक प्राचीन महापुरुषों के अध पतन या छविहनन के सूत्र सजाने के लिए बहुत तत्पर दिखते हैं। महानों का छिद्रान्वेषण करना ही उनकी दृष्टि में मानववाद है और यह बड़ा महत् कार्य है। वे इसे परम यथार्थवादी साहसिक (रोचक) स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक 'एप्रोच' मानते है।शायद इसी ब्याज से वे अपने पाप बोध का औचित्य निरूपण करते हैं। यह प्रकरण इसी लेखकीय मनोवृत्ति की परिणति है।

रत्नावली विषयक इस वृन्तांत में कई रूपान्तर प्राप्त होते हैं। ब्रहद् रामायण माहात्म्य' के अनुसार तुलसी को अपनी पत्नी ममता से प्रेरणा मिली थी। स्वप्न में उन्हें पिता ने कुछ निर्देश दिए थे। उनके अनुसार वे गुप्तार धाट (अयोध्या) में तपोमग्न हो गए। जागने पर वहीं नरहरि के दर्शन हुए। उन्ही के साथ वे वाराह क्षेत्र नैमिषारण्य गए और वहीं रामकथा सुनी। निष्कर्ष यह है कि रत्नावली

का यह प्रकरण अतिकल्पित है। प्रबोध और गृहत्याग वाली धटना, संभव है किसी और तुलसी के साथ हुई हो, किन्तु पचास वर्ष की अवस्था में मानसकार तुलसी के साथ तो यह कदापि संभव नही लगती। विशेष रूप से तब, जबकि आत्मकथ्य के अनुसार वे अविवाहित थे।

यों कुछ विद्वानों ने तुलाराम (तुलसी) के तारक नामक पुत्र और कमला–विमल नामक पुत्रियाँ भी खोज निकाली है।

तुलसी साहित्य मे विवाहित जीवन के दो प्रमाण दिए गए हैं–

१ परयो लोकरीति में "(कवितावली) २. हमने चाखा प्रेम रस पत्नी के उपदेश।" इसमें दूसरी उक्ति तुलसीकृत नही है। प्रथम पंक्ति में 'लोकरीति' विवाह का पर्याय न होकर दुनियादारी का द्योतक है।

मेरे मतानुसार मानसकार तुलसी के आत्मकथों पर शंका नहीं की जा सकती। उन्होंने स्पष्टतः धोषित किया है–

" ब्याह न बरेखी जाति पाँति न चहत हौ।"

तथा

'काहू की बेटी सो बेटा न ब्याहब। (कवितावली)

इससे सिद्ध है कि गोस्वामी जी आजन्म ब्रह्मचारी थे। वस्तुतः अधिकतर जीवनी ग्रंथ प्रक्षिप्त एवं अप्रामाणिक हैं। कवि–कथाकारों और फिल्मी कलाकारो ने तुलसी के जीवन में उतार–चढ़ाव दिखाने के लिए इन प्रसंगों का रसमय विस्तार किया है। प्रत्यक्ष प्रमाणों के अभाव मे हमें गोस्वामी जी के अन्तः साक्ष्यों को ही प्रमाण मानना होगा। उनका स्पष्ट निष्कर्ष यह है कि मानसकार तुलसी गृहस्थ नही थे। अर्थात् रत्ना सें विवाह करने वाले तुलसी कोई दूसरे थे। लक्ष्मण किलाधीश जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में लगभग २६ वर्षो तक तुलसी जयन्ती के अवसर पर निरन्तर यह विचार व्यक्त करते रहेऔर वर्तमान किलाधीश स्वामी मैथिलीरमण जी से यह सन्देश लिखवाते रहे थे कि तुलसीदास जी अविवाहित थे। इसे स्वीकार कर लेने से तुलसी जन्मभूमि की खोज में कई विन्दुओं की धटौती हो जाएगी। सोरों पक्ष मुख्यतः रत्नावली में सहारे तुलसी की जन्मभूमि का दावा करता चला आ रहा है, उसे अपने तर्कों पर पुनर्विचार करना होगा।

भाषा भौगोलिक आधार

गोस्वामी जी की जन्म भूमि के प्रसंग में अनेक विद्वानों ने भाषा से सम्बन्धित तर्क प्रस्तुत किये हैं। कवि जिस अचल में रहता है, उसके जनपदीय शब्दों को चाहे अनचाहे अपने लेखन में शामिल कर लेता है गोस्वामी जी की रचनाओं में अनेक प्रकार के भाषिक प्रयोग देखने को मिलते हैं। उनकी आरम्भिक रचनाएँ जैसे--'जानकी मंगल, पार्वती मंगल, रामलला नहछू में पूर्वी अवधी का प्रयोग हुआ है। दोहावली, बरवै रामायण में पश्चिमी अवधी का प्रभाव है, जबकि 'रामचरित मानस' में 'मानक काव्य भाषा रूप में अवधी प्रयुक्त हुयी है। उसमे यत्र-तत्र बैसवारी अवधी(या मध्य अवधी) का लहजा और क्षेत्र विशेष की शब्दावली भी आई है।

सोरों के पक्षधर विद्वानों का यह तर्क है कि गोस्वामी जी ने अधिकाधिक कृतियों, जैसे- विनय पत्रिका, कवितावली, गीतावली, श्रीकृष्ण गीतावली, वैराग्य सदीपनी, रामाज्ञा प्रश्न तथा हनुमान बाहुक की रचना ब्रजभाषा में की है। यहॉ तक कि "रामचरित मानस" भी ब्रजावधी में लिखा गया है। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का यह तर्क रहा है कि गोस्वामी जी की 'मानस' का व्याकरणिंक ढॉचा ब्रजभाषा पर अपेक्षाकृत अधिक टिका हुआ है। 'तुलसी की भाषा' पर शोध कार्य करने वाले डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव ने यह तर्क दिया है कि " विनयपत्रिका' गोस्वामी जी की अन्तिम और सर्वाधिक आत्मींय कृतिं है। इसका तात्पर्य यह है कि ब्रजभाषा से उनकी विशेष आत्मीयता रही है। चूंकि ब्रजभाषा सोरों के आसपास भी बोली जाती है, इसलिए इन विद्वानों के अनुसार गोस्वामी जी भी उसी क्षेत्र में उत्पन्न हुये होंगे।

गोस्वामी जी की जन्मस्थली के दावेदार तीनों पक्षों राजापुर(बॉदा), सोरो राजापुर(गोण्डा)के विद्वानों ने अपने समर्थन में ऐसे-ऐसे शब्द खोज निकाले हैं जो उनके अनुसार, केवल उन्हीं के क्षेत्र में 'बोले जाते हैं। विडंबना यह है कि इन शब्दो से संबंधित दावे भी साझे के है अर्थात् एक शब्द को लेकर राजापुर (बॉदा) वाले कहते हैं कि यह केवल बॉदा में बोला जाता है। सोरों वाले कहते हैं कि केवल ब्रज में बोला जाता है, और राजापुर (गोण्डा) वालों का यह तर्क है कि यह केवल पूर्वाचंल में बोला जोता है। कारण यह है कि किसी ने तुलसी की भाषा का भौगोलिक सर्वेक्षण नहीं किया है। अधिसंख्य व्यक्तियों को यह नहीं मालूम है कि

यह शब्द उनकी जॅवार के अलावा कहाँ–कहाँ प्रयुक्त होता है?

यह भी विचारणीय है कि आज से ५०० वर्ष पूर्व तुलसी द्वारा प्रयुक्त शब्दो का काफी कुछ अर्थ बदल भी गया होगा। गोस्वामी जी के देशकाल में तब जो भाषा चल रही थी, सभव है, वह वहाँ से स्थानांतरित हो गयी हो। संभव है, वहाँ यह भाषा तुलसी के जीवनकाल मे न रही हो और अब पहुँच गयी हो। इसका निर्णय तो ऐतिहासिक भाषा विज्ञान के आधार पर ही किया जा सकता है, वर्तमान मे 'प्राप्त प्रयोगो' के आधार पर नहीं।

किन्तु भाषा सर्वेक्षण का ऐसा श्रम करना भी अकारथ होगा। इसलिए कि प्रयोग के आधार पर उनकी कर्मभूमि का निर्णय तो किया जा सकता है, जन्मभूमि का नहीं। जैसा कई बार स्पष्ट किया जा चुका है कि गोस्वामी जी सूकरखेत चित्रकूट, अयोध्या और काशी मे बहुत दिनों तक रहे। इन क्षेत्रों की शब्दावली का प्रयोग करना उनके लिए स्वाभाविक ही था, किन्तु इन शब्दों के सहारे जन्मभूमि का दावा कैसे किया जा सकता है? जो लोग बिलायत चले जाते हैं, वे कई वर्षों के प्रवास के बाद उसी लहजे में अंग्रेजी लिखने बोलने लगते हैं, पर इसके आधार पर विलायत को उनकी जन्मभूमि नही सिद्ध किया जा सकता।

गोस्वामी जी के भाषिक प्रयोग का मूल आधार रहा है– विषयवस्तु और सवाद। वे प्रायः पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करते हैं। केवट की भाषा अलग है और वशिष्ठ की भाषा अलग है। ऐसे किसी भाषिक स्वरूप के सहारे तुलसी का जन्म स्थल स्थिर करना कदापि उचित न होगा।

भाषा और शैली के विशेषज्ञ यह मानते हैं कि प्रत्येक भाषा की अपनी अपनी एक विशिष्ट प्रकृति होती है। जैसे– अवधी में वक्रता (लावण्य) अधिक है और ब्रज मे मधुरता। कुछ विद्वानों ने पद प्रयोग वक्रता के आधार पर यह स्थापित करना चाहा है कि गोस्वामी जी की प्रकृति अवधी की भाषिक प्रकृति के साथ ज्यादा जुड़ी हुयी है, किन्तु यह अनुमान ही है, प्रमाण नहीं।

यहाँ गोस्वामी जी की विभिन्न कृतियों में प्रयुक्त जनपदीय देशज शब्द प्रयोग प्रस्तुत किये जा रहें है। बैसवारा क्षेत्र में प्रचलित उनके अर्थ कोष्ठक में है। आवश्यकता यह है कि एक–एक शब्द को लेकर यह खोज की जाये कि कौन–कौन शब्द इन तीनों स्थानों में कहाँ–कहाँ आज भी पूर्ववत जीवित हैं। यही स्थिति लोकोक्तियों, मुहावरों की है। तुलसी शब्दमीमांसा की दिशा में बहुत खोज

हुयी है, निरन्तर होनी भी चाहिए, मेरा विनम्र मत है कि भाषिक प्रयोगो द्वारा यह तो निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अवधी से उनकी अंतरंगता अपेक्षाकृत अधिक रही है, किन्तु यह अवधी गोण्डा, अयोध्या, बैसबारा अंचल से लेकर राजापुर (बाँदा)तक व्याप्त है। इस भाषा–प्रयोग का तर्क देकर किसी एक गाँव को, उनकी जन्मभूमि घोषित कर देना असंगत होगा। मैंने तुलसी की आधार भूत शब्दावली का सर्वेक्षण एक प्ररियोजना के अन्तर्गत अवध के आठ जिलों में करवाया। समस्त व्याकरणिक कोटियों के आधार पर इन शब्दों का तुलनात्मक विवेचन किया गया है–

अकाजा (विघ्न)अँचवाई (धुलवाकर)अढ़कि (ठोकर खाकर)अनइस (भला करते बुरा)अचाँइ (भोजनोपरात हस्त प्रक्षालन) अभार (दायित्व) आठौबाट (पूर्णत) अवडेर (रखकर) औहू (पत्नी को संबोधन) ओसरिन्ह (बारी) अगहुड़ (आगे) आलेहि (ताजा बाँस) उताइल (उतावले/टेढ़े) उपारा (उखाडना) उधारि (उन्मुक्त) उजयरिया (चाँदनी) उनरत (उठते हुए) उपवरहन (तकिया) ऊमरि (गूलर) उहार (आवरण) उपरना (पिछोरी) एतना (इतना) कीदहुँ (कहां कहीं) कोहवर (वैवाहिक प्रथा) काढि (नकालना) कनौडा (प्रिय) कुराई (दरार) कलौर (गाय) कुलह (टोपी) कनछाई (झाड़ना) करसी (कण्डी) कथरी (बिछावन)कोदों (अन्न) कुठिला (भण्डार)कठवत (लकड़ी का पात्र) कूटि (व्यंग्य) कनियां (गोद) कुआच (दुशाला) खगहा (गैंडा खरगोश) खोची (भिक्षा) खेलवार (वैमनस्य) खोरि (त्रुटि) खरभरे (हलचल) गुदरत (छोड़ता) गुदारा (नदी पार करने के लिये नावों का आना–जाना) गुडी (खेल) घालेहिं (बिगाड़ना) चकडोर (खेल विशेष) चौगांव चंग (खेल) जेवनार (भोजन) जेठि (ज्येष्ठ) जोर (जामा) ठवनि (मुद्रा) ठठई (हँसी) डासना डसाना (बिछाना) डाबर (पोखर) डहकत (प्रकट) तरेरी (घूरना) ताकेउ (देखा) दाहू (जलेगा) दहेडी (दधिभाण्ड) दाढीजार (अपशब्द) दहपट (पुष्ट) धंधक धूरी (रिजर्व बैल) धमधूसर (आलसी) नायी (झुकाकर) निनारी (न्यारी) निबुकि (खिसकना) निहोरा (देखा) नारी (पशुओं का झुण्ड) नोई (दूधदुहने की रस्सी) नहछू (नख कटवाने की प्रथा) नहरनी (नख काटने का उपकरण) पतिआऊ (विश्वास करे) पराने (भागना) पीठन बैठारे (पाटे पर बिठाना) पसाऊ (प्रसाद) पोंछि (चीरकर) पुट्ट(स्वर्ण) पवाँरना (पछोरना) पछालि (धोकर) पोच (बुरा) पनही (पदत्राण) पौढ़ाए (लिटादेना) परछन (एक प्रथा) फरहार (फलाहार) फुर (सही) फराक (विशाल) फेकर (चिल्लाकर) बनी (अन्न मे देय मजदूरी) बायन (बैना) बिडरि (डरकर) बुताई (बुझती) बोरि (डुबोकर) बेसाहे

(खरीदे) बरेखी (बरिच्छा) बकुचा (झोला) बाझ (बध्या) बियानी (प्रजनन क्रिया बबुर बहेरे (जंगली पेड़) बाउ (भला) बाटपरै (मुहावरा विशेष) ब्याहभात (विवाह भोज) बरायन (कंगन, छल्ला) भोर (प्रभात) भरुहाये (ऊब गए) भिनसार (मिट्टी का भार) भूभुर (जलती मिट्टी) माख (बुरा) महाउर (ज़ातक) माहुर (विष) भारव (उपजाऊ) मनई (मनुष्य) मनसवा (मर्द) मेहरारू (स्त्री) महतारी (माता) मीजो का गुर पीठ (उपकार) मीजई (मलना) मेरवति (डालना) रगर (हठ) राउर (आपका) रिसाई (रुष्ट) रिरिहाते (गिड़गिड़ाते) रार (झगड़ा) लूगा (लुक) लहकौरि (दही गुड़ का भोजन) लैरुवा (बच्चा) सुपेती (श्वेत) सुआर (रसोइयाँ) सेरवाना (विसर्जन) सकारे (प्रातः) सरावन (पाटा) सालन (व्यंजन) सलोने (स्वादिष्ट) शालि (चावल) स्वाग (लोकनाट्य) सूपोदन (भट्टाभात) हुमकि (जोर लगाकर) हगि भर्यो (मलत्यागकर) हॉक, हँकारि (पुकार) हरवा (हार)

इन आधार भूत और ठेठ देशज शब्दो के सर्वेक्षण से यह निष्कर्ष निकाला है कि तुलसी की कृतियों में प्रयुक्त ये शब्द गोण्डा–फैजाबाद क्षेत्र में आनुपातिक रूप से आज भी अपेक्षाकृत अधिक पाये जाते है। हाँ, कुछ शब्द विलीन या अर्थान्तरित हो गये हैं, लेकिन तुलसी की अवधी की भाषिक प्रकृति अभी पूर्वांचल मे सुरक्षित है। यह देशीपन उनकी ब्रजभाषा में नहीं मिलता। वह मानक काव्य भाषा रूप में प्रयुक्त हुयी है। चित्रकूट और काशी में दीर्घ प्रवास के बावजूद बुन्देली तथा 'बनारसी' लहजे को भी गोस्वामी जी ने नहीं अपनाया। उन्होंने जन्म से अवधवास करते हुये जो भाषा सीखी थी, उसी ग्राम्यगिरा, भदेसबानी, अवधी मे अपूर्व साहस के साथ अवधेश का चरिताख्यान रचा, जो उनकी अंगीभाषा है, किन्तु इन भाषिक प्रयोगों के आधार पर अवध क्षेत्र के किसी एक निश्चित गाँव को उनकी जन्मभूमि के रूप में चिह्नित नहीं किया जा सकता। यह मात्र पूरक, पुष्टिकारक एक सहयोगी (सपोर्टिंग) साक्ष्य हो सकता है। अभी तो इतना ही कहना तर्कसंगत होगा कि ब्रज तुलसीदास द्वारा अंगीकृत काव्यभाषा है और अवधी उनकी मातृभाषा रही है। इससे अवध में उनके जन्म होने का पूर्वानुमान होता है।

लोक सांस्कृतिक आधार

सामाजिक मानवशास्त्र की यह मान्यता है कि किसी भी व्यक्ति के जीवन वृत्त (मुख्यतः जन्म स्थान) की खोज मे उसकी आंचलिक संस्कृति का विश्लेषण बहुत सहायक हो सकता है। सांस्कृतिक अध्ययन के अंतर्गत उस क्षेत्र के सामाजिक रीति रिवाज, पर्व—त्योहार, खानपान आदि का विवेचन किया जाता है। गोस्वामी जी की कृतियों में एक तो अवध अंचल का विस्तृत वर्णन मिलता है, दूसरे मिथिला अचल का और तीसरे ब्रज अंचल का । उन्होने जनकपुर में सीता स्वयंवर और राम विवाह सम्पन्न कराया। "श्री कृष्ण गीतावली ' में गोस्वामी ने ब्रजभूमि का जो वर्णन किया है, वह काव्य रूढ़ियों के अनुसार किया गया लगता है। हॉ अवध अंचल का वर्णन गोस्वामी जी ने अपेक्षाकृत अधिक सघनता के साथ किया है। अवध के साथ उन्होंने किष्किंधा, लंका, पंपासुर, नासिक, चित्रकूट जैसे अनेक स्थानों का प्रकृति चित्रण किया है, किन्तु वह प्रकृति श्रीलंका, तमिलनादु,महाराष्ट्र कर्नाटक तथा आंध्र प्रदेश की न होकर मुख्यतः महाकोशल की है।

किसी प्रबन्ध काव्य में देशकाल और वातावरण का जो चित्रण किया जाता है वह कथा के आग्रहवश होता है। लेखक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सबन्धित पर्यावरण का यथार्थ चित्रण करे। इसलिए इन अंचलों के लोक सांस्कृतिक तत्त्वों के सहारे अनुपात के आधार पर गोस्वामी जी की जन्म भूमि का निष्कर्ष निकालना तर्क सगत नहीं होगा। किन्तु जैसा कि निवेदन किया जा चुका है, यदि प्रत्येक देश काल—वातावरण पर अवध अंचल का सर्वाधिक प्रभाव अंकित हो गया हो तो उससे यह संकेत अवश्य मिलता है कि इस भूमि के प्रति गोस्वामी जी के मन में अधिक आसक्ति रही है। कुछ विद्वानों ने "हमारी जन्म भूमि यह गॉव 'कोसलदेश उजागर कीन्हयो (गीतावली)" अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ' 'जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि' (मानस) 'राजाराम अवध रजधानी' जैसी उक्तियों को तुलसी के आत्मकथ्यों से जोड़ कर अवध को जन्म भूमि घोषित कर दिया है, किन्तु ज्ञातव्य है कि ये संवाद मात्र हैं, या अन्य कवियों के उद्‌गार हैं, न कि ये तुलसी के अन्तरसाक्ष्य। हमतो मात्र घनत्व के आधार पर यह अनुमान कर सकते हैं कि अयोध्या के प्रति गोस्वामी जी की संपृक्ति विशेष थी।

अवध लोक संस्कृति का एक तर्क 'रामलला नहछू' के सहारे दिया जाता

है। डॉ० माता प्रसाद गुप्त के अनुसार यह उनकी आरम्भिक रचनाओं में एक है ओर यह १६१६ वि०की रचना है। 'नहछू' एक लोक प्रथा विशेष है, जिसमे नाइन घर–घर जाकर सुहागिनों के महावर लगाती है और मांगलिक बेला में पधारने का निमंत्रण देती है। गोस्वामी जी के शब्दों में

'घर–घर फिरई नउनिया तो गोतिनी बोलाबई'।

रामलला कर नहछू गोतिनि सब आवहु।"

इस कृति में गोस्वामी जी ने श्रीराम के मांगलिक आयोजन का वर्णन किया है। वहाँ अहिरिन, तबोलिन, दर्जिन, मालिन नाइनि, बारिन धोबिन आदि प्रजा वर्ग की स्त्रियाँ नेग निछावर लेती है, मान–मनुहार करती हैं, और राजा दशरथ तथा और रानी कौसल्या से दान–दक्षिणा के साथ–साथ हास परिहास करती हैं। इस कृति मे एक ओर तो जातीय नायिका–भेद का वर्णन है और दूसरी और राजा प्रजा के मध्य खुले व्यवहार अर्थात सह–अस्तित्व का भी। राजसी वैभव का वर्णन इसमें काव्य–रूढ़ियों के अनुसार किया गया है तथा सामंती व्यवस्था का चित्रण कवि के सूक्ष्म निरीक्षण के सहारे। यह काव्य श्रृगार परक है। यहाँ तक तुलसी का मर्यादा बोध अभी सक्रिय नहीं हुआ था। इसके बावजूद फल श्रुति में कहा गया कि यह नहछू गाने वाला ऋद्धि–सिद्धि से संपन्न हो जायेगा। कुछ विद्वानों ने 'नहछू' की प्रामाणिकता पर संदेह किया है। मिश्रबंधुओं का तर्क है कि इसमे कौसल्या की किसी जेठानी का उल्लेख है। उन्होंने मात्र एक शब्द के बहाने इसे प्रक्षिप्त सिद्ध करने की कोशिश की। प्रचलित राम कथा के अनुसार कौसल्या जेष्ठारानी भी तथा सुमित्रा और कैकेयी कनिष्ठा। यह सच है, किन्तु यह भी सच है कि अवध के लोक जीवन मे देवरानी–जेठानी जैसे नाते केवल अपने घर तक सीमित नहीं रहते; बल्कि ये सबोधन संपूर्ण बस्ती और बिरादरी के मध्य व्यवहार में आते हैं। संभव है, कौसल्या ने अपने पुरजनों–परिजनों में से किसी बुजुर्ग महिला को जेठानी कहा हो। इस कृति में नहछू का जिस प्रकार आयोजन दिखाया गया है, उसपर भी यह आपत्ति प्रकट की गयी है कि राम का विवाह तो जनकपुर मे ही हो गया था। तब नहछू अयोध्या में क्यों? संभव है कि बरात सहित अयोध्या लौटने पर वहाँ भी लोकाचारो' की औपचारिकता पूरी की गयी हो। संभव है यह नहछू यज्ञोपवीत के समय का हो। अवध में बटुक को भी बरुआ (श्रीवर) कहा जाता है और उसे वर के रूप में सजाया भी जाता है। वह ब्रह्मचारी रूप में काशी के लिए प्रस्थान करता है, किन्तु मनुहारकर लौटा लिया जाता है और तब वह लौकिक जीवन मे सम्मिलित मान लिया जाता है। उसके बाद विवाह की 'वरदेखी'शुरू हो जाती है। 'नहछू' एक प्रतीकात्मक प्रथा है। यह कोई आद्यबिंब या 'टोटम' है। अवध में ब्रह्मचारी का नाखून कटवाना वर्जित होता है। वर यात्रा पर जाते हुए, वर सज्जा के समय पहली

बार नाउन अपनी नहरनी से उसके नाखून काटती (या छूती) है और फिर महावर लगाती है। यही जनेऊ में किया जाता है। यह विवाह हेतु प्रस्तुति का सूचक माना जाता है। इसे चित्र रचना (चिरैय्या काढ़ना) भी कहते हैं। एक विशिष्ट लोकाचार है यह। गृहस्थ जीवन में प्रवेश का पूर्वाभ्यास यही शुरू हो जाता है। इसी प्रकार नहछू में लक्ष्मण को दूसरे बाप से उत्पन्न कहा गया है,जो स्त्रियों का परिहास है। नहछू के २० छंदो में कई ऐसी गालियॉ व्याप्त हैं। तात्पर्य यह है कि यह कृति पूर्णतः प्रामाणिक है। 'नहछू' प्रथा आज भी पूर्वांचल में सुरक्षित है। मुझे अपने सर्वेक्षण के दौरान ग्रामीण स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले जन्मोत्सव से संबन्धित एक नहछू गीत परसपुर (गोण्डा) में लगभग पॉच वर्ष पूर्व प्राप्त हुआ था। एक नहछू डा० इन्दुप्रकाश पाण्डेय ने 'अवधी लोकगीत' मे दिया है। सोहर डॉ० पाण्डेय के द्वारा प्राप्त नहछू इससे बहुत मिलता जुलता है। मुझे प्राप्त नहछू बिरहा शैली का है, किन्तु दोनों की विषय वस्तु एक दूसरे से अभिन्न है–

राम परे भुइयॉ जुड़ॉय
धॅगरिनि नार न छीनै।
शंकर जी आये डमरू बजावैं
होत है हाहाकार। धगॅरिनि नारन छीनै।
नारद जी आवैं, बीना बजावैं; होत है जय–जय कार।
धॅगरिनि नार न छीने ।।
बैठीं नउनिया नेगा मांगें
रानी लेबै गले का हार.।
आई मालिनियां नेगा मॉगे
रानी लेबै गले का हार।
धॅगरिनि नार न छीनै ।।
बैठी धॅगरिनियॉ नेगा मॉगें
रानी लेबै अयोध्या का राज।
तुलसी दास आस रघुवर की,
हरि के चरन बलि जावॅ
धॅगरिनि नार न छीनै।।

इस गीत के सहारे कहा जा सकता है कि गोस्वामी जी ने यह प्रथा अवध से ही ग्रहण की है। यह भी कि अवध से उनका लगाव अपेक्षाकृत अधिक रहा है, जो उनके अवधवासी होने का संकेत देता है।

'नहछू' के अतिरिक्त गोस्वामीजी ने विभिन्न रीतिरिवाजों, लोकप्रथाओं, स्थानों,

पर्वोत्सवो, और लोक विश्वासों का वर्णन किया है। किन्तु उनके सहारे यह नहीं कहा जा सकता कि यह लोक संस्कृति केवल अमुक गॉव की है और वहीं तुलसी की जन्म स्थली है। तुलसी ने विभिन्न, खाद्यान्नों, परिधानों, अलंकरणों, प्रसाधन–सामग्रियों और व्यसनों का उल्लेख किया है, किन्तु वे सभी किसी गॉव या क्षेत्र विशेष तक सीमित नहीं है। गोस्वामी जी की काव्य कृतियों में विभिन्न उद्योगों, विपणन–पद्धतियों, जातीय व्यवसायों, साथ ही राजनय, प्रशासन और धर्माचारों के उल्लेख हुए हैं, जो समूची हिन्दी पट्टी में न्यूनाधिक मात्रा में उपलब्ध हैं। तात्पर्य यह है कि लोक सांस्कृतिक तत्त्वों के सहारे जन्मभूमि का निभ्रन्ति निर्णय कर पाना सम्भव नहीं है। अवध के पक्षकार कुछ विद्वानों का तर्क है कि ब्रज संस्कृति में माखन राटी का अधिक प्रचलन रहा है और अवध में " सूपोदन सुरभी" या दूधभात का। तुलसी ने सर्वत्र भात को ही वरीयता दी है, या प्रसंग "जथा जोग पीठन बैठारे" विशेष निषीदन व्यवस्था स्वीकार की है, जिससे लगता है कि वे अवध वासी थे, किन्तु यह कथन भी दूरवर्ती है। तुलसी साहित्य में लोक संस्कृति प्रायः देशकाल तथा परिस्थिति के अनुरूप चित्रित हुई है। अतः उसके सहारे तुलसी की जन्म स्थली का 'इदमित्थम्' निष्कर्ष नही निकाला जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि अवध अंचल से उनका अपेक्षाकृत अधिक जुड़ाव रहा है।

ात्मकथ्यो (अन्तः साक्ष्यो) के आलोक मे

गोस्वामी जी ने विभिन्न संदर्भों में अपने जीवन व्यापी अनुभवों के कई सकेत दिए हैं। बाल्यकाल में उन्हें जो दुख–दैन्य झेलना पड़ा, उसका उल्लेख उन्होंने बारम्बार किया है। उन्हें माता पिता ने छोड़ दिया था। इसकी गहरी वेदना उन्होंने यत्र–तत्र सर्वत्र व्यक्त की है। " कवितावली" में वे कहते हैं––

"मातु पिता जग जाइ तज्यौ विधिहू न लिखी कछु भाल भलाई"

एक स्थान पर वे पुनः कहते हैं–

"जननी जनक तज्यौ जनमि करम बिनु बिधिहु सृजहु अवडरे" ।कुछ पक्तियों में तो वे बहुत कटु हो गये हैं और इसीलिए माता पिता को वे 'स्वारथ के साथी' तक कह देते हैं– "स्वारथ के साथिन तज्यौ तिजरा को सो टोटक औचटि उचटिन हेरयो"। तथा " तनु तज्यो कुटिल कीट ज्यों।"(विनय पत्रिका–२७२)

उनके जन्म के समय बधावा तक नहीं बजा, बल्कि माता पिता को पाश्चाताप तक हुआ। यह तुलसी के लिए बड़ी त्रासद स्थिति थी।

" जायो कुल मंगन,वधावोना बजायो
सुनि भयो परिताप पाप जननी–जनक को।"

इस कथन से स्पष्ट है कि तुलसी जन्मना संतप्त थे। इस उक्ति का एक अर्थ पं० भद्रदत्त शर्मा ने इस प्रकार किया है–

"तू ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ। तेरी बधाई भी बजी, किन्तु सुन! तू माता पिता के लिए परिताप पाप रूप हुआ, क्योंकि कुछ काल बाद ही वे चल बसे। तुलसी के जीवनवृत्त से यह सूचना तो मिलती है कि उनको जन्म देने के कुछ दिनो बाद ही माता का निधन हो गया था, किन्तु पिता भी नहीं रहे, इस पंक्ति से यह अर्थ निकालना कदापि तर्क संगत नहीं है।

इन कथनों से इतना तो स्पष्ट ही है कि माता पिता के प्रति एक गहरी वितृष्णा तुलसी के मन मे थी। इसीलिए परम मर्यादावादी होकर भी उन्होंने कही माता–पिता की वन्दना नहीं की है। किन्तु इससे किसी पाप–बोध का अर्थ नही निकाला जा सकता।

गोस्वामी जी ने बचपन में अनेक यातनाएं भोगी थीं। वे एक–एक दाने के लिए मारे–मारे फिरे थे। उसका उल्लेख उन्होंने अनेक पंक्तियों में किया है। किन्तु

प्रश्न यह है कि उनके परित्यक्त होने का कारण क्या था? भुक्तमूल नक्षत्र के जातक के कई उपाय होते हैं, जैसे बेंच देना, नाक कान छेदकर प्रतीकात्मक बलि दे देना छेदी नाम दे देना आदि। ये उपाय न करके तुलसी का परित्याग क्यों किया गया? उन्हें बुआ/मौसी या उनकी दासी चुनिया की शरण में क्यों रखा गया? बाद मे भी पिता द्वारा क्यों अस्वीकृत किया गया? क्या यह उनके पट्टीदारो का षडयत्र था? क्या वे जारज थे? क्या पाँच वर्ष के (बत्तीसों दॉत युक्त) होने के कारण भयकंर दिख रहे थे? मेरे मतानुसार इस परित्याग का कारण था, दारिद्य या भुखमरी। वे 'जाचक कुल' में जनमे थे। चारों ओर अकाल था। तब अकाल प्राय पडा करता था (कलि बारहिं बार अकालपरे , बिनु अन्न दुखी सब लोग मरैं) काशी की महामारी और बुभुंक्षा का उल्लेख गोस्वामी जी ने मर्मान्तक स्वरों में किया है। क्षुधातुर होकर लोग बेटा बेटी तक को बेंचे डाल रहे थे। किसान को न खेती थी न व्यापारी को वाणिज्य। न किसी को चाकरी मिलती थी, न भिक्षान्न। दारिद्य–दशानन से सम्पूर्ण भारत भूमि त्रस्त थी। तभी गोस्वामी जी को यह अनुभव हुआ कि' आगि बडवागि ते बड़ी है आग पेट की'। और यह भी कि गरीबी से बड़ा कोई दु ख नही होता– 'नहिं दरिद्र सम दुःख जगमाही।' निश्चय ही उनके माता पिता ने दारिद्यवश उनका परित्याग कर दिया था, उसी प्रकार जैसे बालक नाभादास को उसके माता पिता मार्ग में क्षुधित मुर्च्छित छोड़कर चले गये थे। फिर किसी सत ने उनको सचेत किया, अन्न देकर जीवन रक्षा की और अपने सान्निध्य में रख लिया। तुलसी का पालन पोषण इसी प्रकार हुआ। वे मंदिर में खोंची मांग मांगकर पेट भरते रहे हैं। 'कवितावली' में वे लिखते हैं–

बारे ते बिलात बिल्लात द्वार–द्वार दीन
जानत हौं चारि फल चारि हू चनक को।।

(कवितावली७/७३)

अर्थात् बचपन में मैं मारा–मारा फिरा यदि चने के चार दाने कहीं मिल जाते थे तो मैं उन्हें धर्म,अर्थ,काम, मोक्ष (पुरुषार्थ चतुष्टय) के तुल्य मान कर ग्रहण करता था। वे पुनः कहते हैं–

'हुतो ललात कृशगात खात खरि
मोद पाइ कोदों कने।'

अर्थात् मैं जीर्ण–शीर्ण शरीर लिए हुए अन्न की लालसा से दर दर भटकता

रहा हूँ और कहीं कोदो के टुकड़े भी मिल जाते थे तो उसे अहोभाग्य मानता रहा हूँ। वे यहाँ तक कहते हैं कि मैं दूसरों की दृष्टि में बड़ा नीच और अपमान का पात्र माना जाता था। निरंतर कुत्तो की तरह टुकड़ों के पीछे लालायित रहता था

'टुकनि को घर–घर डोलत कंगाल बोलि'

अर्थात् मैं कंगालों की तरह रिरियाता हुआ कौरे–कौरे के लिए घर–घर भटकता था।

उनका एक कथन है– नीच निरादर भाजन कादर कूकर टूकर लानि ललाई। उनकी भुखमरी का प्रमाण यह कथन है–

" आपने चना चबाई हाथ चाटियत है"

(कवितावली)

हनुमान बाहुक में वे अपने प्रभु की वन्दना करते हैं–

"पालो तेरे टूक को परेहू चूक।"

यह जनश्रुति है कि गोस्वामी जी बचपन मे हनुमान जी के मंदिर में महावीरी खोंची मांग–मांग कर अपना पेट भरते थे–

"खायो खोंची मांगि तेरो नाम लियोरे।"

(विनयपत्रिका-३३)

वे यह भी कहते हैं–

"हाहा करि दीनता कही द्वार–द्वार
बार–बार परी न छार मुँह बायो।"

एक स्थल पर उनका कथन है–

'फिरयौ ललात बिनु नाम उदर लगि।'

'विनय पत्रिका' में वे असन–बसन बिनु जीवन यापन का उल्लेख करते हैं और बड़ी व्यथा के साथ यह कहतें हैं कि–

"बालदशा हूँ न खेल्यो खेलत सुदाऊँ मैं।"

अर्थात् बाल क्रीड़ाएँ किसे कहते हैं? यह मैने बचपन में जाना ही नहीं। केवल सुदाऊ (शूद्रोचित) जीवन मुझे नसीब हुआ। इतने आत्मकथ्यों के सहारे अब यह निष्कर्ष निकालने में द्विविधा नहीं रह जाती है कि तुलसी का बाल्यकाल बडा यातना पूर्ण था। कालान्तर में उन्हें प्रबोध हुआ और वे कहां से कहां पहुँच गए? जंगली और नशीली या कि जहरीली भाँग का पौधा प्रभु कृपा से तुलसी बिरवा

सदृश पूज्य हो गया–

"जेहिसमिरत भयो भाँग ते तुलसी तुलसीदास।"

यही भाव अन्यत्र एक और दोहे में व्यक्त हुआ है। उनके अनुसार बचपन जितना दारिद्यग्रस्त था, आज का जीवन उतना ही समादृत है–

"घर घर माँगे टूक पुनि, भूपनि पूजे पाय।"

(दोहावली -१०९)

उन्होंने आत्मकथ्यों में स्पष्ट उल्लेख किया है कि कालान्तर में उन्हें मुगलो की 'मनसबदारी' तक दी गयी, जिसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया–

"तुलसी अब का होहिंगो नर को मनसबदार।"

गोस्वामी जी ने इन आत्मकथ्यों द्वारा बताया है कि उन्होंने किशोरकाल मे गुरुमुख से सूकरखेत में रामकथा के कई पारायण सुने थे–

"मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सु सूकरखेत"

गुरु ने उन्हें राम भक्ति का प्रबोध दिया। कवि के शब्दों में–

"गुरु कह्यो राम भजन नीको, मोहि लगत राज ड्गारो सो"

इस भक्ति भावना तथा साहित्य–साधना के क्रम में वे अयोध्या, चित्रकूट काशी आदि स्थानो में वर्षों तक रहे। अयोध्या के प्रति उनके मन में असन्क्ति थी। "राजा मेरे राम राजा अवध सहरु हैं" या "तुलसी तिहारो घसरु जायो है घर को आदि कथन इसके प्रमाण हैं।" उनकी कई उक्तियों से यह भी स्पष्ट होता है कि चित्रकूट उन्हें अत्यधिक प्रिय था। जब–जब वे ऊबते थे, सहजतः कह पड़ते थे–

"अब चित चेत चित्रकूटहिं चल" वहीं पहुंचकर उनके तन मन में व्याप्त वैश्विक विष का शमन होता था। काशी तो उनकी परम प्रिय साधना स्थली थी। वहा के पंडितों से प्रताड़ित होकर भी वे यही कहते रहे कि काशी में रहना तो वे नही छोड़ेगें–

"जनम मुक्ति महि जानि ज्ञान खानि अघहानिकर।
जहां बस शभुभवानि सो कासी सेयिय कसन।।"

उन्होंने अपना यही सौभाग्य माना था

"यह भरतखण्ड समीप सुरसरि थल भलो संगति भली।"

काशी में अकाल, महामारी, काशीवासी टोडर आदि के संबंध में गोस्वामी जी ने बहुत लिखा है। उन्हें अपने वंश–परिवार और देश–दशा पर यथेष्ट गर्व रहा

है। वे लिखते हैं–

"दियो सुकुल जन्म शरीर सुन्दर देत जो फल चारि को"

"भलि भारत भूमि भले कुल जन्म समाज शरीर भलो लहिंकै।"

अपनी कुलीनता के प्रति आश्वस्त होकर भी तुलसी ने अपनी जाति की चिन्ता नही की। वे लिखते हैं–

"धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जुलाहा कहौ कोऊ।

काहू की बेटी सो बेटा न ब्याहब काहू की जाति बेगार न सोऊ।"

वे मानते थे कि मेरी न कोई जाति है न किसी कि जाति की चिन्ता है। बस राम की जाति ही उनकी जाति है—"साहब को गोतु गोतु होतै है गुलाम को"। एक आत्मकथ्य के अनुसार वे ब्रह्मचारी थे–"'ब्याह न बरेखी जाति पाति न चाहत हौं' उन्होंने साँस–साँस से राम की आराधना की। जीवन के अन्तिम चरण में कुछ व्याधियों से पीड़ित होकर तुलसीदास ने काफी आत्मभत्सर्ना की। एक स्थल पर लिखा कि राम के नाम का भोग करने के कारण ही यह दण्ड़ उन्हें मिला है–"फूटि–फूटि निकसत लोन राम राय को।" अन्तिम दिनों में मुह में सोना डालने, शरीर को "रामपुर" पहुँचाने और सद्‌गति प्रदान करने की बारम्बार याचना उन्होंने की।

गोस्वामी जी के इतने आत्मकथ्यों के बावजूद जन्मस्थान विषयक कोई प्रत्यक्ष उक्ति प्राप्त नहीं है। शायद किशोर काल तक पीडित करने वाले अपने गांव समाज के प्रति विरक्ति भर् गयी थी उनके मन में। जैसे माता पिता से विराग हो गया था। उन्होंने इतना कहा–

"तुलसी तहाँ न जाइए, जहाँ जनम को गाँव।

गुन औगुन देखें नहीं,धरै तुलसिया नाँव।"

इसके आधार पर कुछ विद्वानों का अभिमत है कि तुलसी का "तुलसिया" प्रयोग पूर्वी अवधी की प्रवृत्ति है, अर्थात् उनका गांव इसी क्षेत्र में रहा होगा। किन्तु यह स्थूल प्रतीतिमात्र है। इसके आधार पर किसी एक सुनिश्चित गाँव का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।

संगत समाधान : 'तुलसी तिहारो घर जायो है'

तुलसी जन्म स्थली विषयक विभिन्न तर्कों और तथ्यों पर दृष्टि डालने के बाद यही निष्कर्ष निकलता है कि राजापुर (बाँदा), सोरों और राजापुर (गोण्डा) इनमे किसी के पास प्रामाणिक ऐतिहासिक साक्ष्य नहीं हैं। "मूल गोसाईंचरित और "घट रामायाण" की पंक्तियाँ प्रक्षिप्त ज्ञात होती है। यही नहीं, ये दोनों कृतिया भी संदिग्ध हैं। अंग्रेज इतिहासकारो ने राजापुर, तारी, हस्तिनापुर जैसे कई नाम दिये हैं, जो जनश्रुतियों पर आधारित हैं। गजेटियर भी उन्हीं के सहारे लिखे गये हैं। उनमें "टेम्परिंग" भी हुई है। विशेष रूप से लाला सीताराम के प्रयास से एक गजेटियर में 'तुलसीदास फ्राम सोरों' आदि शब्द डाले गये हैं।

तुलसी से जुड़े हुए अवशेष तीनों स्थानों पर दिखाए जाते हैं। "मानस" की पाण्डुलिपि, तुलसी प्रतिमा, हनुमान जी की मूर्ति, तुलसी रोपित वृक्ष, नरहरि आश्रम, सूकरखेत, शिला लेख और स्मारक न्यूनाधिक तीनों स्थानों पर हैं। तीनों के निकट अपनी अलग ननिहालें और ससुरालें हैं। ये अवशेष असली हैं या नकली? अर्थात् पाण्डुलिपि साढे चार सौ वर्ष पुरानी है या परवर्ती? मूर्ति तुलसी की है या राजा साधु की? इन पर वर्षों तक विवाद किया जा सकता है। लेकिन यह बहस निरर्थक होगी; क्योंकि इन तर्कों का तुलसी की जन्मभूमि से कोई सम्बन्ध नहीं है।पाडुलिपि कहीं भी पायी जा सकती है। मूर्ति कहीं भी लगायी जा सकती है और स्मारक कहीं भी बनाया जा सकता है। मुख्य प्रश्न यह है कि तुलसी के पूर्वजों की जमीन–जायदाद पर [illegible] था। वंशपरंपरा कहां की है? आरम्भ में राजापुर (बॉदा) वाले एक कच्चे मकान की भूसा भरी कोठरी को तुलसी का पैतृक गृह बताते थे, लेकिन अब वे उसका नाम नहीं लेते। इसी के देखा–देखी सोरों वालों ने 'जोग मोहल्ला' के एक खण्डहर को तुलसी का पैतृक भवन बताना शुरू किया, लेकिन झूठ बहुत दिनों तक नहीं चल पाया। अब उन्होंने भी इसकी चर्चा बन्द कर दी है। राजापुर (गोण्डा) वाले भी इस अन्धी दौड़ में सम्मिलित हुए। उन्होंने 'आत्मा राम का टेपरा' नामक एक गोचर भूमि खोज ली और जिलाधिकारी के आदेश से उसकी खतौना बनवी ली। इसका कोई पुरातात्विक महत्त्व नहीं हैं।

पैतृक परंपरा का दावा तीनों स्थानो ने किया है। राजापुर (बॉदा) के

गणपति उपाध्याय के वंशजों को तुलसी का उत्तराधिकारी कहा गया है, जबकि तुलसीदास निःसन्तान थे। संभव है कि वे उनके शिष्यों के उत्तराधिकारी हों।सोरों में कृष्णदास का परिवार है। सोरों के कृष्णदास श्री नन्ददास के आत्मज कहे गये है और नंददास को तुलसी का अनुज कहा गया है। इस प्रकार सोरों में तुलसी के वंशजों का दावा किया जाता है, जबकि तुलसी एवं नन्ददास का भ्रातृत्व निर्विवाद रूप से सिद्ध नहीं है। राजापुर (गोण्डा) में दुबे परिवार के कुछ व्यक्ति स्वयं को तुलसी का वंशज मानते हैं। वे पितृ पक्ष में उनके नाम तर्पण करते हैं और मांगलिक कार्यक्रमों में उनका आवाहन करते हैं। उस क्षेत्र में इस आशय के कुछ लोक गीत मिले अवश्य हैं किन्तु अभी इनका व्यापक विश्लेषण अपेक्षित है।

तुलसी–जन्मभूमि का यह दावा बहुत कुछ सूकरखेत पर निर्भर है। पूरे देश में दर्जनों सूकरखेत बताए गये हैं। किन्तु मुख्य विवाद सोरों और पसका के सूकर खेत के बीच है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार असली सूकरखेत घाघरा–सरयू–संगम (वर्तमान गोण्डा) में है। सोरों सूर्योपासना और महावाराह की पूजा का महान तीर्थ है। शूकर क्षेत्र–सूकर खेत से सोरों शब्द विकसित हो सकता है या नही? इस पर भी विवाद हैं। तुलसी ने जिस ठेठ अवधी भाषा का प्रयोग किया है और जिस लोक संस्कृति को अपनाया है, वह निःसन्देह अवध की है। इसे ध्यान में रखते हुए कई विद्वानों ने उन्हें अवध से जोडा है। सेंगर जी ने पहले उन्हे पसका में उत्पन्न लिखा था, फिर उन्हें राजापुर, इलाहाबाद का बना दिया। अन्य कई विद्वानों ने यह अनुमान व्यक्त किया कि तुलसी का जन्म अवध क्षेत्र (वर्तमान फैजाबाद गोण्डा) में कहीं हुआ था। पसका में नारायणदास–नरसिंह या नरहरिदास का जो कुटीर है, वहाँ वर्षो से पौष मेला लगता है। इससे सिद्ध होता है कि यह स्थान सरयू–संगम होने के कारण प्राचीन काल से तीर्थ स्थान के रूप में मान्यता प्राप्त है।

उपर्युक्त तथ्यों और तुलसी के आत्म कथ्यों का मिला–जुला उपयोग करते हुए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि तुलसी का जन्म पसका के निकट अवध के किसी गाँव में हुआ होगा। बचपन भुखमरी और अनाथावस्था में बीता। किसी प्रकार गुरू नरहरि के आश्रम में उन्हें शरण मिली। यहाँ उन्होंने कई वर्षो तक राम कथा (रामायण) सुनी। उनकी प्रतिभा और निष्ठा से प्रसन्न होकर गुरु ने अग्रेतर शिक्षा के लिये उन्हें शेष सनातन जी के पास काशी भेज दिया, जहाँ

लगभग पन्द्रह वर्षों तक उन्होनें नाना पुराण निगमागम' का अध्ययन किया और फिर साधना करते हुए वे काव्य रचना मे प्रवृत्त हो गये। सबसे पहले अवधी मे उन्होने श्रृंगार परक रचना–"रामलला नहछू" लिखी। अयोध्या में ही उन्होने रामचरित मानस" का प्रणयन किया। बीच–बीच में वे चित्रकूट, सोरों, नैमिष काशी आदि में प्रवास करते रहे। जीवन का अन्तिम चरण अस्सीघाट में बीता।

गोस्वामी जी के आत्मकथ्यों से स्पष्ट है कि उन्होने विवाह नहीं किया था। वे आजीवन ब्रह्मचारी रहे। ऐसी स्थिति में रत्नावली वाला प्रकरण प्रक्षिप्त है। मध्ययुग में तुलसी नाम के कई कवि लगभग समानान्तर काव्य रचना करते रहे है। इनके जीवन वृत्त परस्पर उलझ गये हैं। मानसकार तुलसी ने एक आत्म कथ्य मे स्वयं को अयोध्या मे उत्पन्न धोषित किया है। 'कवितावली' के एक छन्द मे वे कहते हैं कि किष्किधा वाले सुग्रीव और लंका वाले विभीषण कहाँ के कनावडे (सगे) हैं कि आप ने इनका कल्याण कर दिया? जब कि मै तो आपके घर जवॉर मे पैदा हुआ, और मैं आप के घर का हूँ। किसी से काम लेने के लिये भौगोलिक निकटता का भी तर्क देना एक मनोवैज्ञानिक यथार्थ है। पूरा छंद इस प्रकार है–

"धरम के सेतु जग मंगल के हेतु भूमिभार हरिबो को अवतार लियो नर को।
नीति औ प्रतीति प्रीति चालि प्रभु मान लोक वेद राखिबे को प्रन रधुबर को।
बानर विभीषण की और के कनावड़े हैं सो प्रसंग सुने अंग जरै अनुचर को।
राखे रीति अपनी जो होई सोई बलि, तुलसी तिहारो घरु जायो है घर को' ।

इन पंक्तियों को कुछ विद्वानों ने अपने सहज कुटिल कुतर्क के कारण अभिधा में नहीं स्वीकार किया,जबकि "तुलसी तिहारो घरु जायो है घर को," मे कोई लक्षणा–व्यन्जना नहीं है। यह शुद्ध सपाट बयानी है और शुद्ध अन्तः साक्ष्य है। यदि तुलसी–जन्मभूमि का संगत समाधान स्थिर करने का सत् संकल्प जाग्रत हो जाएगा तो गोस्वामी जी के इस आत्म कथ्य को स्वीकारना ही पडेगा। इसकी ओर लगभगा ५० वर्षों पूर्व आचार्य चन्द्रबली पाण्डे ने स्पष्ट संकेत किया था। उनके शब्दों में "निश्चय ही तुलसीदास का घर कहीं अवध में था और वहीं कहीं उनका जन्मस्थान भी।" (तुलसी की जीवन भूमि पृष्ठ २४) एल्विन, डॉ० श्यामसुन्दर दास डॉ० वडथ्वाल जी, करुणा सिंधु, परमहंस जी, परुषोत्तमाचार्य जी, नृत्य गोपाल दास जी, स्वामी वासुदेवाचार्य जी, फलाहारी जी, रामनन्दाचार्य जी, प्रेमदास जी

रामायणी जी, स्व०श्री सीता राम शरण, महाराज वासुदेवानन्द सरस्वती, डॉ० भगवदाचार्य, जैसे सन्त और डॉ० जगदीश गुप्त, पं०राम किंकर जी, डॉ० विद्यानिवास मिश्र, पं०श्रीपति मिश्र, डॉ०राममूर्ति त्रिपाठी, प्रो०हरिकृष्ण अवस्थी, डॉ० चंद्रप्रकाश सिंह, डॉ०भगवती प्रसाद सिंह, डॉ० रमाशंकर तिवारी सदृश अनेक विद्वानों ने इसी का समर्थन किया है। इनमें कुछ विद्वान स्पष्ट रूप से राजापुर (गोण्डा) को जन्मभूमि स्थिर करने का आग्रह कर रहे है, जबकि मेरा आग्रह यह है कि जब तक कोई पुष्ट प्रमाण प्राप्त न हो जाए, तब तक इतना ही घोषित किया जा सकता है कि तुलसी का जन्म अवध में पसका के निकट किसी गॉव में हुआ था। संभव है कि वे राजापुर (बॉदा) में जा बसे हों। सभव है कि सोरो आते जाते रहे हों। यह भी संभव है कि सोरों और राजापुर के तुलसी कोई दूसरे हों, जिन्होंने हनुमान चालीसा,"लवकुश काण्ड" आदि की रचना की थी। मानसकार तुलसी सरयूपारीण दुबे आस्पद में याचक कुल में उत्पन्न हुए थे। सोरों के तुलसी शुक्ल आस्पद के थे और देवरिया की पूर्वज–परंपरा वाले तुलसी मिश्र आस्पद के थे।

शोध क्षेत्र में कोई भी निष्कर्ष अन्तिम और अन्यतम नहीं होता, लेकिन किसी भी विवाद को एक आध आशंका के आधार पर सैकड़ों वर्षों तक लम्बित किये रहना भी न्यायोचित नहीं कहा जा सकता है। पांच सौ वर्षो बाद तुलसी पंचशती के अवसर पर यदि हम इस महात्मा और महाकवि की जन्म स्थली का निष्कर्ष न निकाल पाये तो यह समस्त हिन्दी शोध–समीक्षा के लिये कलंक की बात होगी। इसी ध्येय–धर्म से प्रेरित होकर सभी स्थानों का भ्रमण करके, स्टिल–वीडियो चित्र बनवाकर, इतिहास ग्रन्थों और पाण्डुलिपियों का पारायण करके, कई गोष्ठियों मे तर्क–वितर्क सुन करके अन्त में मानस की शपथ लेकर, मानस भक्तों की शुद्धि बुद्धि का आश्रय लेकर यही निष्कर्ष निर्धारित किया गया है। शेष भविष्य के गर्भ मे है।